सुभाष चन्द्र बोस

श्रीयुत व्यथित हृदय

भारती साहित्य मन्दिर

मोती लाल नेहरू रोड इलाहबाद व देहली

मूल्य ।)

बाबू श्याम लाल ने भारती साहित्य मन्दिर के लिये मोहन प्रेस देहली में पं० भगवत दयाल के प्रबन्ध से छपवा कर प्रकाशित की।

श्रीयुत सुभाष चन्द्र बसु

श्री सुभास बसु देश के नेताओं में अपनी एक खास जगह रखते हैं, ऐसी जगह रखते हैं, जिस पर किसी भी देश को गर्व हो सकता है। इन की देश-भक्ति आज हर एक हिंदुस्तानी के मुंह से तारीफ के गीत गवा रही है। सच बात तो यह है, कि चांद की तरह चमकती हुई इनकी देश-भक्ति ने इन्हें हिंदुस्तानियों के दिल पर बिठा दिया है, देश-भक्ति के नशे में इन्हों ने क्या क्या नहीं किया घर द्वार छोड़ा, जेलों में रहे, ज़िंदगी के सुखों को हमेशा के लिये तिलांजली देदी, और छोड़ा उस ओहदे को, जिस के लिये लोग तरसते फिरते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये, कि सुभाष बाबू ने देश की सेवा के लिये अपनी तमाम जिंदगी ही उस सुपुर्द करदी है। ऐसी हालत में अगर हिंदुस्तान के निवासी सुभाष बाबू की इज्जत करते हैं, तो मेरी समझ में वे उन की इज्जत नहीं करते, बल्कि करते हैं अपने कर्त्तव्य की इज्जत।

सुभाष बाबू सादगी की मूर्ति हैं, दुबले पतले शरीर के ऊपर सादगी के एक कुर्ते धोती के अलावा

और कुछ नहीं दिखाई देता। पर चेहरे पर एक अजीब तेज चमकता है। बोलते हैं, तब अक्षर-अक्षर में बिजली का असर मालूम होता है। ऐसा जान पड़ता है, कि उस दुबले पतले ढांचे में ताक़त का ख़ज़ाना भरा हुआ है।

मैंने एक बार सुभाष बाबू को देखा था। वे बीमार थे। पर उन के चेहरे पर एक अनोखा तेज था। वैसा तेज बहुत कम नेताओं के चेहरों पर देखने को मिलता है। चेहरे पर एक सादगी थी, सरलता थी, और थी एक गंभीरता। वह गंभीरता साफ़-साफ़ बता रही थी, कि सुभाष बाबू का दिल बहुत बड़ा है। उन्हों ने दुनिया का, और दुनिया की परिस्थितियों का काफी अध्ययन किया है।

सुभाष बाबू नेता हैं, देष-भक्त हैं, दार्शनिक हैं, और सब से बढ़ कर वह हैं ग़रीबों मज़दूरों के हितुवा। आज से नहीं, लड़कपन से उन के दिल में ग़रीबों का प्रेम समाया हुआ है। ये जब छोटे थे उस समय ग़रीबों के दुखों को देख कर इन के दिल को बड़ी चोट लगती थी। ये भरसक ग़रीबों की सहायता भी किया करते थे। ग़रीबों के दुखों को देख कर के ही इन्हों ने एक बार दुनिया को जानने की कोशिश की थी, और इस के

लिये ही सन्यासी होगये थे। लेकिन अच्छा हुआ सुभाष बाबू सन्यास की ज़िंदगी को छोड़ कर घर लौट आये। अगर वे उस समय सन्यासी हो जाते तो आज भारत माता की तकलीफ़ों को दूर करने के लिये बीड़ा कौन उठाता ?

लड़कपन की ज़िंदगी

सुभाष बाबू १८९७ ई० की २३वीं जनवरी को कटक में पैदा हुये थे। इन के पिता राय जानकीनाथ कटक में ही रहा करते थे। यों तो वे रहने वाले 'चौबीस' परगना नामक ज़िले के कोदौलिया नामक गांव के थे। जानकी बाबू बड़े हिम्मति आदमी थे। शिक्षा में उन का विशेष प्रेम था। पहले इन की हालत बहुत ख़राब थी। लेकिन इन्हों ने कभी हिम्मत न हारी वे बराबर हिम्मत के साथ ज़िंदगी के रास्ते पर क़दम बढ़ाते गये। इस का नतीजा यह हुआ, कि एक दिन उन्हों ने अच्छा नाम पैदा कर लिया। उन की योग्यताओं को देख कर कटक की सरकार का भी ध्यान इन की ओर गया, और उस ने इन्हें अपना प्लीडर बना दिया। इस ओहदे पर रह कर जानकी बाबू ने सरकार को अपनी योग्यता का अच्छा परिचय दिया था। सरकार ने इन के कामों से खुश होकर के ही इन्हें

राय बहादुर की पदवी दी थी।

जानकी बाबू के दिल में तालीम के लिये बड़ी जगह थी। वे मुल्क के हर एक बच्चे को पढ़ा-लिखा देखना चाहते थे। म्यूनिसिपैल्टी के ओहदे से इन्हों ने इस के लिये अच्छी कोशिश भी की थी। इन्हों ने अपने हर एक लड़के को अच्छी से अच्छी तालीम दी है। लड़कों को पढ़ाने-लिखाने में इन्हों ने बहुत काफी धन खर्च किया है। इन की इस अच्छी इच्छा के ही कारण आज इन के सभी लड़के दुनिया में नाम पैदा कर रहे हैं। सुभाष बाबू भारत के राष्ट्रपति रह चुके हैं, शरद चन्द्र बसु अच्छे देश-भक्त हैं, और डाक्टर सुनील चन्द्र बसु अच्छे डाक्टर हैं। हर एक माता-पिता को अपने बच्चों को पढ़ाने-लिखाने के बारे में बाबू जानकी नाथ से शिक्षा लेनी चाहिये।

सुभाष बाबू की लड़कपन की ज़िन्दगी पर इन के मां-बाप की ज़िन्दगी का काफी असर पड़ा है। सुभाष बाबु के माता-पिता बहुत ही अच्छे विचार के आदमी थे। ग़रीबों से प्रेम करते थे, और रखते थे दिल में भगवान् के चरणों का ध्यान, सुभाष बाबू की माता का इस ओर ज़्यादा ध्यान था। सुभाष बाबू लड़कपन में अक्सर अपनी मां के पास बैठ कर साधु सन्तों और तीर्थों की कहानियां सुना करते थे। यह कहानियां इन्हें

बड़ी प्यारी लगती थीं और उन का इन के दिल पर काफी असर भी पड़ता था।

लड़कपन ही से सुभाष बाबू का दिल दया से भरा हुआ था। लड़कपन ही में यह गरीब दुखियों को उतना ही प्यार करते थे, जितना आज करते हैं। अक्सर यह गरीबों और दुखियों की तकलीफों को देख कर रोने लगते थे। इन की इस आदत से लोगों को इन पर बड़ा ताज्जुब होता था। यह भरसक गरीबों की मदद भी किया करते थे।

शिक्षा

सब से पहले १६०६ ई० में सुभाष बाबू का नाम कटक के कालिजियट स्कूल में लिखाया गया। इस स्कूल में उन दिनों एक मास्टर थे, श्रीयुत बेनी माधव दास। बेनी बाबू बड़े अच्छे चरित्र के आदमी थे। त्याग सरलता, और सादगी कूट-कूट कर उन के दिल में भरी हुई थी। बेनी बाबू ही सुभाष बाबू को पढ़ाया करते थे। बेनी बाबू की जिन्दगी का सुभाष के दिल पर अच्छा असर पड़ा। सुभाष बाबू ने बेनी बाबू की ज़िन्दगी से बहुत कुछ सीखा। गरीबों से प्रेम करना बेनी बाबू ने ही सुभाष बाबू को सिखाया था।

सुभाष बाबू अपने स्कूल में पढ़ने में बड़े तेज़ थे।

जब जब इम्तहान होता, यह अपने साथियों से बहुत आगे रहा करते थे। सुभाष बाबू की तेज़ बुद्धि को देख कर ही बेनी बाबू उन की अधिक इज़्ज़त किया करते थे। सुभाष भी बेनी बाबू में बड़ी भक्ति रखते थे। कुछ दिनों के बाद जब बेनी बाबू का तबादिला होगया, तब सुभाष बाबू को बड़ा दुःख हुआ था।

सुभाष बाबू का धर्म की ओर ज़्यादा झुकाव था इस लिये ये राम और कृष्ण की कहानियां भी सुना करते थे। इस तरह की कहानियां इन्हें बड़ी प्यारी लगती थीं। एक ओर से इन कहानियों को सुनते थे, और दूसरी ओर करते थे ग़रीबों को प्यार। इस का यह मतलब नहीं कि सुभाष बाबू पढ़ते-लिखते न थे। सच बात तो यह थी, कि सुभाष बाबू कभी किताबों के कीड़ा न बनते थे। इन की तेज़ बुद्धि इन की बड़ी मदद करती थी। वे जो कुछ पढ़ते थे, बड़ी समझ दारी के साथ पढ़ते थे। यही कारण है, कि ये स्कूल में अपने साथियों से आगे रहा करते थे।

१६१४ ई० में इन्हों ने प्रवेशिका परीक्षा पास की। इस इम्तहान में सुभाष बाबू को दूसरा नम्बर मिला था। लेकिन अन्ग्रेज़ी का पर्चा इन्हों ने सब से अच्छा किया था। इन की अन्ग्रेज़ी को देख कर इन के परिक्षक

ने कहा था, ऐसी अच्छी अन्ग्रेज़ी तो खुद मैं भी नहीं लिख सकता ।

कुमार रहने की प्रतिज्ञा

प्रवेशिका परिचा पास करने के बाद सन १९१३ ई० में सुभाष बाबू पढ़ने के लिये कलकत्ता चले गये। वहां ये प्रेसीडेन्सी कालेज में नाम लिखा कर पढ़ने लगे। सुभाष बाबू कालेज के उन लड़कों में न थे, जो किताबों को पढ़ते और सैर-सपाटे में अपना वक्त बिताया करते हैं। सुभाष बाबू की आंखें इस वक्त भी मुल्क की ओर लगी हुई थीं। मुल्क में छाई हुई गरीबी को देख कर भीतर ही भीतर इन का दिल दुखी रहा करता था। कभी-कभी ये अपने मुल्क की गरीबी पर विचार भी किया करते थे।

उन्हीं दिनों मिर्ज़ापुर स्ट्रीट के मेडीकल मेटन में डाक्टर सुरेष नामक सज्जन रहा करते थे। वे बड़े देश-भक्त थे। उन्हों ने कुछ नवजवानों की मदद से एक आश्रम खोला। इस आश्रम में जो लोग भरती होते थे, उन्हें देश की सेवा के लिये ज़िन्दगी भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा करनी होती थी। बंगाल के नवयुवकों ने इस आश्रम में भरती होकर ज़िन्दगी भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की। जब सुभाष बाबू को इस आश्रम का हाल

हुआ तब ये भी वहां जा पहुँचे। इन के दिल में देश-भक्ति पहले से ही मौजूद थी। इन्होंने आश्रम में नाम लिखा कर देश की सेवा के लिये ज़िन्दगी भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा कर ली। इन के साथ ही इन के बड़े भाई शरद चन्द्र वसु ने भी आश्रम में नाम लिखाया था। सुभाषबाबू अपनी इसी प्रतिज्ञा के कारण इस समय भी अविवाहित हैं। मुल्क की ख़िदमत के लिये इस तरह की प्रतिज्ञा करने वाले हिन्दुस्तान क्या दुनिया के इतिहास में बहुत कम मिलेंगे।

सन्यासी होने के लिये

सुभाष बाबू कालेज में पढ़ते ज़रूर थे, लेकिन इन का मन पढ़ने में न लगता था। सच बात यह थी, कि दुनिया और दुनिया की हालतों को देख कर इनके मन में एक बेचैनी सी पैदा होगई थी। दुनिया के बारे में अक्सर इन के मन में तरह तरह के सवाल पैदा हुआ करते थे। ये अपने सवालों को बड़े पंडितों के सामने पेश भी किया करते थे। पर किसी के जवाब से इन के मन को तसल्ली न मिलती थी। इस का नतीजा यह हुआ, कि इन के मन की बेचैनी बढ़ती ही गई, और ये एक दिन बिना किसी को बताये हुये सन्यासी होने के लिये घर से निकल पड़े।

सुभाष बाबू घर से निकल कर दिल्ली, आगरा, मथुरा, काशी, गया, इत्यादि कई बड़े नगरों और तीर्थ स्थानों में गये। इधर ये घर से निकले और उधर इन के मां-बाप इन का पता न मिलने के कारण बहुत बेचैन हो गये। बाबू जानकी नाथ ने सुभाष बाबू का पता लगाने के लिये बड़ी-बड़ी कोशिशें कीं। कई जगह तार भेजे गये, टेलीफोन किये गये, तीर्थ स्थानों में खोज कराई गई पर कहीं भी सुभाष बाबू का पता न लगा। वैद्यनाथ और देवघर के पहाड़ों पर भी इन की खोज कराई गई। ज्योतिषियों और पंडितों से भी इन के बारे में सवाल पूछे गए, लेकिन जब तक सुभाष बाबू खुद लौट कर न आगये, किसी को कुछ भी पता न चला।

सुभाष बाबू हिन्दुस्तान के कई बड़े बड़े तीर्थ स्थानों में घूमे, इन की कई बड़े बड़े साधु सन्यासियों से भेंट भी हुई। उन्होंने सबके सामने मन के सवालों को रखा। सबने अपनी बुद्धि के मुताबिक जवाब दिये। लेकिन सुभाष बाबू को किसी के जवाब से तसल्ली न मिली। आगरा में इनकी मुलाकात एक सन्यासी से हुई थी। उसका नाम प्रेमानन्द और वह ग्रेजुयेट था। उसने सुभाष बाबू को घर लौट जाने की राय दी थी।

सुभाष बाबू आगरा से वृन्दावन गए। वृन्दावन

में इनकी भेंट एक साधु से हुई। सुभाष बाबू ने उस साधु से वेदान्त शास्त्रों का अध्ययन किया। इसके बाद वे काशी चले गये। काशी में ये राम कृष्ण दास नामक एक साधु के पास रहा करते थे, और अपने मन की शान्ति के लिए उन से ज्ञान की बातें सुना करते थे। काशी में राम कृष्ण मिशन के ब्रह्मानन्द स्वामी के पास भी ये कुछ दिनों तक रहे। स्वामी जी ने इन्हें घर लौट जाने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि तुम बिना मां-बाप की आज्ञा के घर से निकले हो। इस लिये तुम्हें सन्यासी न हो कर घर लौट जाना चाहिये।

काशी से सुभाष बाबू बोध गया गये। सच बात यह है, कि इनके बेचैन मन को कहीं शान्ति न मिली। ये जो चाहते थे, वह कोई न बता सका। बोध गया में सुभाष बाबू ने साधु-सन्यासियों को बुरे-बुरे काम करते हुए देखा। इस से सुभाष बाबू का दिल सन्यासी होने की तरफ से हट गया, और ये लौट कर अपने घर चले गये। जिस समय से ये घर पहुंचे, इनके मां-बाप इन से खूब लिपट-लिपट कर रोए थे।

बीमारी

हमेशा सोच-विचार में पड़े रहने के कारण सुभाष बाबू की तन्दुरुस्ती ख़राब हो गई। उन्होंने ज्ञान के

सामने अपनी तन्दुरुस्ती की ओर कभी ध्यान ही न दिया। तन्दुरुस्ती सुधारने वाली दूसरी बातों की चर्चा ही क्या, जब कि ये ठीक समय पर खाना भी न खाया करते थे। ज्ञान की चिन्ता उन्हें हमेशा सताया करती थी। विद्यार्थी जीवन में सुभाष बाबू की तन्दुरुस्ती में जो घुन लगा, वह इस समय भी बराबर अपना काम करता चला जा रहा है। सुभाष बाबू ने देश की खिदमत के लिए अपनी तन्दुरुस्ती भी नष्ट कर दी।

आगरा, दिल्ली, मथुरा, काशी इत्यादि में घूमने के कारण सुभाष बाबू की तन्दुरुस्ती बहुत खराब हो गई। ये जब घर लौट कर गये, तब इन्हें मियादी बुखार आने लगा। कई महीने तक बराबर इलाज होता रहा, लेकिन कुछ फ़ायदा न हुआ। जब कलकत्ते में इलाज से कुछ फ़ायदा न हुआ तब कार्सियां चले गये। वहां इनकी तन्दुरुस्ती में काफ़ी सुधार हुआ और कुछ दिनों के बाद ये बिलकुल अच्छे हो गए।

फिर कालेज में

बीमारी से छुटकारा पाने के बाद सुभाष बाबू फिर प्रेसीडेन्सी कालेज में नाम लिखा कर पढ़ने लगे। कालेज के लड़कों में ये काफ़ी मशहूर थे। कालेज के लड़के इन्हें बड़ी इज़्ज़त की निगाह से देखते थे। इनकी

तेज़ बुद्धि और इनकी गम्भीरता ने इन्हें सबका अगुवा बना दिया था। ये प्रायः कालेज के लड़कों की नेता-गिरी भी किया करते थे। १९१५ में इन्होंने एफ़० ए० की परीक्षा पास की। इस परीक्षा में इन्होंने पहला नंबर प्राप्त किया था।

कालेज में सुभाष बाबू देश-भक्त के नाम से भी मशहूर थे। उस समय कालेज में पढ़ते हुए भी ये देश के कामों में हिस्सा लिया करते थे। जिन दिनों सुभाष बाबू कालेज में पढ़ रहे थे, वहां एक अन्ग्रेज़ मास्टर था। उस का नाम था, विटिन। किसी कारण वश कालेज के लड़कों और विटिन साहब में खटपट हो गई। सुभाष बाबू ने विद्यार्थियों का पक्ष लिया। कुछ विद्यार्थियों ने विटिन साहब के ऊपर हमला कर दिया। यद्यपि हमला करने वालों में सुभाष बाबू न थे, लेकिन फिर भी वे इस दोष से बरी न रह सके। हमला करने वाले सभी विद्यार्थी कालेज से निकाल दिये गये। सुभाष बाबू भी कालेज से अलग कर दिये गये। लेकिन एक आदमी की सिफ़ारिश से स्काटिश चर्च कालेज में भरती कर लिये गए। इसी कालेज में सुभाष बाबू ने बी० ए० की परीक्षा पास की।

उलझन में

सुभाष बाबू के माता-पिता चाहते थे कि हमारा लड़का सरकार में अच्छा नाम पैदा करे। इसी लिए जब सुभाष बाबू बी० ए० का इम्तिहान पास कर के एम० ए० की तैयारी करने लगे, तब इनके पिता ने इन्हें विलायत जा कर सिविल सरविस की परिक्षा पास करने की राय दी। लेकिन सुभाष बाबू को उनकी यह राय पसंद न आई। सच बात तो यह थी, कि सुभाष बाबू कोई बड़ा हाकिम बन कर सरकार की कुर्सी पर नहीं बैठना चाहते थे। उन के दिल में देश की गहरी भक्ति समाई हुई थी। उन्होंने अपनी ज़िन्दगी भारत माता को सौंप दी थी। वे हमेशा गरीबों और किसानों की तकलीफ़ों से दुखी रहा करते थे। इस लिये जब उन के पिता ने उन्हें यह सलाह दी, तब से एक बड़ी उलझन उधर बाप की आज्ञा, और इधर भारत माता की सेवा। ये सोचते थे, कि अगर मैं विलायत जा कर सिविल सरविस का इम्तहान पास कर लेता हूं तो देश के गरीबों की सेवा मुझ से न हो सकेगी। अपनी एक चिट्ठी में खुद इन्होंने लिखा है:—

पिता जी ने मुझे विलायत जा कर सिविल सरविस की परीक्षा पास करने की राय दी है। मैं बड़ी चिन्ता

में फंस गया हूं। लेकिन घर वाले कहते हैं। मुझे विलायत जाना होगा। घर के हर एक आदमी की राय है, कि मैं विलायत जा कर सिविल परीक्षा का इम्तहान पास करूं मगर मैं जानता हूँ, कि मुझे इस इम्तहान में कामयाबी नहीं मिल सकती। मेरा दिल इस इम्तहान में शामिल होने के लिये मुझे मना कर रहा है। घर वालों की राय है, कि सिविल सर्विस के इम्तहान में फेल होजाने पर विलायत का केमब्रिज युनिवर्सिटी में नाम लिखा कर पढ़ने लगना। लेकिन मैं विलायत डिग्री लेने के लिये नहीं जाना चाहता। एक मन कहता है, कि इन्कार करदूं। पर सोचता हूं, ज़िन्दगी में फिर कभी विलायत जाने का मौक़ा मिले या न मिले। जो हो, लेकिन यह तो निश्चय सा है, कि अगर मैं सिविल सरविस के इम्तिहान में पास होगया, तो मुझे अपने कर्त्तव्य से गिरना पड़ेगा।

सुभाष बाबू की इस चिट्ठी से यह मालूम होरहा है, कि वे डिगरी लेने के लिये विलायत नहीं जाना चाहते थे डिगरी से बढ़कर उन्हें उन का मुल्क प्यारा था। वे ठाट-बाट की ज़िन्दगी न बिता कर अपने मुल्क की खिदमत करना चाहते थे। इसी लिये इनका मन उलझन में पड़ गया। लेकिन मां-बाप की आज्ञा के सामने इन

की कुछ न चली। अन्त में इच्छा न रहते हुये भी इन्हें विलायत जाना पड़ा।

विलायत में

सुभाष बाबू की इच्छा नहीं थी। लेकिन मां-बाप की इच्छा के मुताबिक विलायत जाना ही पड़ा। विलायत में ये केम्ब्रिज युनिवर्सिटी में नाम लिखा कर पढ़ने लगे। लेकिन ये केवल पढ़ने ही के लिये विलायत नहीं गये थे। ये वहां गये थे, ज्ञान प्राप्त करने। इस लिये विलायत में रहते हुये इनका हर एक क्षण ज्ञान प्राप्त करने ही में खर्च होता था। विलायत के आदमियों की ज़िन्दगी और उनकी रहन सहन सुभाष बाबू को बहुत अच्छी लगती थी। वहां के आदमियों का आपस में मिल कर रहना, और हमेशा काम में लगे रहना सुभाष बाबू को बहुत अच्छा लगता था। सुभाष बाबू ने उनकी इस ज़िन्दगी की बड़ी तारीफ की है, उन्हों ने एक जगह लिखा है:—यहां की जलवायु भी इन को महनत करना सिखाती है। एक आदमी दूसरे आदमी के साथ आदमी की तरह बरताव करता है। चाहे जितनी दूर चले जाइये, हर रास्ते में कहीं भी भिकारी नहीं दिखाई देता। यहां के आदमी बेकार बैठे रहना नहीं जानते। वे हमेशा किसी न किसी काम में लगे

रहते हैं। वहां के आदमी काम करने से कभी नहीं थकते। उन में निराश का भाव बिलकुल नहीं है। ये केवल आगे बढ़ना और चलना जानते हैं। काम में लगे रहने पर भी यहां के आदमी अपनी तन्दरुस्ती का बहुत ख्याल रखते हैं।

सुभाष बाबू विलायत में पढ़ते थे, पर ये वहां भी अपने देश को न भूल सके। ये वहां भी समय-समय पर अपने देश की ख़िदमत किया करते थे। जिन दिनों सुभाष बाबू विलायत में पढ़ रहे थे, वहां हिन्दुस्तानियों की ओर से एक सभा नियत की गई थी। उस सभा का नाम था, 'भारतीय समिति' इस सभा की हफ़्ते में एक बार बैठक हुआ करती थी। समय-समय पर इस सभा में हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े नेताओं और विद्वानों के लेक्चर हुआ करते थे। सुभाष बाबू भी सभा के कामों में हिस्सा लिया करते थे।

सुभाष बाबू ने सिविल सरविस की परीक्षा पास कर के हिन्दुस्तान लौट आये। जिस समय ये हिन्दुस्तान लौट कर आये, उस समय देश की हालत काफ़ी बदल चुकी थी। उस समय देश में चारों ओर महात्मा गांधी का नाम लिया जारहा था। इस के पहले भी देश में बहुत सी घटनाएं घट चुकी थीं। सुभाष बाबू के दिल

पर उन घटनाओं का काफ़ी असर पड़ा था, और उन की देश-भक्ति उनसे बहुत मज़बूत होगई थी।

देश बन्धु दास के साथ

जिन दिनों सुभाष बाबू विलायत में थे, हिन्दुस्तान में एक बड़े ज़ोर की आंधी चल पड़ी। उस आंधी को असहयोग की आंधी कहते हैं। देश का ऐसा कोई कोना न बचा था, जहां इस आंधी का असर न फैला हो। देश का कोई ऐसा आदमी न बचा था, जिस के दिल पर इस आंधी का कुछ न कुछ असर न पड़ा हो। लड़के स्कूल कालेज छोड़ रहे थे, और बड़े-बड़े वकील अदालतें। पं मोतीलाल, देशबन्धु दास, इत्यादि बड़े-बड़े वकीलों ने असहयोग के समय में अपनी-अपनी वकालत छोड़ कर देश की सेवा में भाग लिया था। उन दिनों बंगाल के नेता देशबन्धु दास थे। सारा बंगाल देश बन्धु दास के चरणों पर लोटता रहता था।

देशबन्धु दास सुभाष बाबू के दिल के भीतर छिपी हुई देश-भक्ति को अच्छी तरह जानते थे। उन्हें यह मालूम था, कि सुभाष बाबू मुल्क की ख़िदमत करने के लिये बहुत बेचैन हैं। १९२९ ई० में जब असहयोग की आंधी जब बड़े ज़ोरों में फैली, तब देशबन्धु दास ने चिट्ठी लिख कर सुभाष बाबू को बुला लिया। सुभाष

बाबू तो यह चाहते ही थे। वे आई० सी० ऐस० के मोह को ठुकरा कर तुरन्त हिन्दुस्तान चले आये, और मुल्क की ख़िदमत करने लगे। सुभाष बाबू के इस त्याग पर बड़े-बड़े लोगों को ताज्जुब हुआ था। कारण, कि सुभाष बाबू ने जो चीज़ छोड़ी थीं, उसके लिये अक्सर लोग जी तोड़ कोशिश किया करते हैं।

सुभाष बाबू देशबन्धु के साथ रह कर मुल्क की ख़िदमत करने लगे। देशबन्धु दास एक महापुरुष थे। ऐसे महापुरुष दुनिया के इतिहास में बहुत कम नज़र आते हैं। देशबन्धु दास की सरल ज़िन्दगी का सुभाष बाबू के दिल पर बड़ा असर पड़ा। सुभाष बाबू ने खुद देशबन्धु दास की कई जगह बड़ी तारीफ़ लिखी है। देशबन्धु दास ने उन दिनों एक स्कूल खोला था। इस स्कूल का नाम था, 'नेशनल कालेज।' वे एक अख़बार भी निकालते थे। जब सुभाष बाबू विलायत से आये, तब देशबन्धु दास जी ने इन्हें यही दोनों काम सुपुर्द किये। सुभाष बाबू ही इस कालेज के प्रधान थे। यह कालेज कुछ दिनो तक बड़ी अच्छाई के साथ चलता रहा, और सुभाषबाबू ने उस की अच्छी सेवा की थी।

गिरफ़्तारी

लेकिन सुभाष बाबू को यह मंजूर न था, कि ये

सिर्फ कालेज ही का काम करें। इनके दिल में हमेशा एक आंधी सी उठा करती थी। देश की खिदमत के लिये ये प्रायः बेचैन रहा करते थे। इस लिये जब आन्दोलन ज़ोर पकड़ा, तब ये भी आन्दोलन में कूद पड़े। थोड़े ही दिनों में सारे बंगाल में इन का नाम गून्ज उठा। इन्हें पाकर बंगाल के आन्दोलन ने इतना ज़ोर पकड़ा, कि सरकार भयभीत सी हो उठी। भला सरकार एक नवजवान को देश-भक्ति के रास्ते पर कैसे आगे बढ़ने देसकती थी, सुभाष बाबू की उबलती हुई देश-भक्ति को देख कर १६२६ ई० के दिसम्बर महीने में सरकार ने सुभाष बाबू को गिरफ्तार कर लिया।

सुभाषबाबू के साथ ही देशबन्धु दास जी भी गिरफ़्तार किये गये थे। दोनों आदमियों को पांच-पांच महीने की सादी क़ैद की सज़ा दी गई थी। सुभाष बाबू ने सज़ा के हुकम को सुन कर कहा था, कि मैं मुर्गी चोर तो हूं नहीं, जो मुझे इतनी कम सज़ा दी जारही है। सुभाष बाबू और देशबन्धु दास, दोनों एक ही जेल में रखे गये थे। जेल में सुभाष बाबू देशबन्धु दास जी को खाना बना कर खिलाया करते थे। देशबन्धु दास जी के लिये सुभाष बाबू के दिल में इस समय भी बड़ी गहरी भक्ति है। देशबन्धु दास इस समय दुनिया में नहीं

बाबू तो यह चाहते ही थे। वे आई० सी० ऐस० के मोह को ठुकरा कर तुरन्त हिन्दुस्तान चले आये, और मुल्क की ख़िदमत करने लगे। सुभाष बाबू के इस त्याग पर बड़े-बड़े लोगों को ताज्जुब हुआ था। कारण, कि सुभाष बाबू ने जो चीज़ छोड़ी थी, उसके लिये अक्सर लोग जी तोड़ कोशिश किया करते हैं।

सुभाष बाबू देशबन्धु के साथ रह कर मुल्क की ख़िदमत करने लगे। देशबन्धु दास एक महापुरुष थे। ऐसे महापुरुष दुनिया के इतिहास में बहुत कम नज़र आते हैं। देशबन्धु दास की सरल ज़िन्दगी का सुभाष बाबू के दिल पर बड़ा असर पड़ा। सुभाष बाबू ने खुद देशबन्धु दास की कई जगह बड़ी तारीफ़ लिखी है। देशबन्धु दास ने उन दिनों एक स्कूल खोला था। इस स्कूल का नाम था, 'नेशनल कालेज।' वे एक अख़बार भी निकालते थे। जब सुभाष बाबू विलायत से आये, तब देशबन्धु दास जी ने इन्हें यही दोनों काम सुपुर्द किये। सुभाष बाबू ही इस कालेज के प्रधान थे। यह कालेज कुछ दिनो तक बड़ी अच्छाई के साथ चलता रहा, और सुभाषबाबू ने उस की अच्छी सेवा की थी।

गिरफ़्तारी

लेकिन सुभाष बाबू को यह मंज़ूर न था, कि ये

सिर्फ कालेज ही का काम करें। इनके दिल में हमेशा एक आंधी सी उठा करती थी। देश की खिदमत के लिये ये प्रायः बेचैन रहा करते थे। इस लिये जब आन्दोलन ज़ोर पकड़ा, तब ये भी आन्दोलन में कूद पड़े। थोड़े ही दिनों में सारे बंगाल में इन का नाम गून्ज उठा। इन्हें पाकर बंगाल के आन्दोलन ने इतना ज़ोर पकड़ा, कि सरकार भयभीत सी हो उठी। भला सरकार एक नवजवान को देश-भक्ति के रास्ते पर कैसे आगे बढ़ने देसकती थी, सुभाष बाबू की उबलती हुई देश-भक्ति को देख कर १६२६ ई० के दिसम्बर महीने में सरकार ने सुभाष बाबू को गिरफ़्तार कर लिया।

सुभाषबाबू के साथ ही देशबन्धु दास जी भी गिरफ़्तार किये गये थे। दोनों आदमियों को पांच-पांच महीने की सादी क़ैद की सज़ा दी गई थी। सुभाष बाबू ने सज़ा के हुक्म को सुन कर कहा था, कि मैं मुर्गी चोर तो हूं नहीं, जो मुझे इतनी कम सज़ा दी जारही है। सुभाष बाबू और देशबन्धु दास, दोनों एक ही जेल में रखे गये थे। जेल में सुभाष बाबू देशबन्धु दास जी को खाना बना कर खिलाया करते थे। देशबन्धु दास जी के लिये सुभाष बाबू के दिल में इस समय भी बड़ी गहरी भक्ति है। देशबन्धु दास इस समय दुनिया में नहीं

हैं, पर सुभाष बाबू इस समय भी उन्हें अपना राजनीतिक गुरू मान कर बराबर याद किया करते हैं।

बंगाल में बाढ़

सुभाष बाबू जब जेल से छुट कर आये, तब आन्दोलन बन्द होचुका था महात्मा गांधी ने आन्दोलन को बन्द कर के मुल्क को बहुत कुछ नाउम्मीद कर दिया था। देश के बड़े-बड़े नेता और खुद महात्मा गांधी भी स्वदेश के प्रचार में लगे हुये थे। देश के हर एक हिस्से में स्वदेश के प्रचार के लिये ज़ोरदार कोशिशें की जारहीं थीं। सुभाष बाबू ने भी इसी काम को अपने हाथ में लिया। स्वदेशी प्रचार के लिये सुभाष बाबू ने बड़ी-बड़ी कोशिशें कीं। इन की ही कोशिशों से सारे बंगाल में स्वदेश की लहर सी फैल चली।

जिन दिनों सुभाष बाबू स्वदेशी प्रचार के काम में लगे हुये थे, उन्ही दिनों बंगाल में ज़ोरों की बाढ़ आई। बहुत सा हिस्सा पानी में डूब गया, और काफ़ी धन-ज़न की हानि हुई। बहुत से आदमी बे घर-द्वार के हो गये। लोग अन्न और कपड़े की कमी के कारण मरने लगे। सुभाष का दिल इन ग़रीबों की आवाज़ को सुन कर कांप उठा, और ये सच्चे दिल से उन की सेवा में लग गये। इन्हों ने खुद बाढ़ से डूबी हुई जगहों का दौरा

किया । इन्हों ने ग़रीबों और दुखियों की मदद के लिये कई सभायें खोलीं। इन सभाओं की तरफ़ से काफ़ी धन इकट्ठा किया गया, और उस से ग़रीबों को मदद पहुंचाई गई। बाढ़ के ज़माने में सुभाष बाबू ने दुखियों और ग़रीबों की जो सेवा की थी, उस की लोग इस स य भी तारीफ़ किया करते हैं। सच-मुच सुभाष बाबू जन-सेवा के एक बहुत बड़े आदर्श हैं। जहां ये एक ऊंचे दरजे के नेता हैं, वहा उन का दिल बहुत बड़ा है। उस दिल में हर एक जाति, हर एक मज़हब, और हर एक देश के आदमी के लिये काफ़ी जगह है। इसी लिये तो लोग सुभाष बाबू को महापुरुष कहते हैं।

कौन्सिल-प्रवेश

सुभाष बाबू शुरू से ही कांग्रेस के कामों में हिस्सा लेते आरहे हैं। कांग्रेस के सालाना जलसों में भी ये बराबर शामिल हुआ करते थे। कांग्रेस की ओर से मुल्क के सामने जो काम रखा जाता, उसे पार करना ये अपना धर्म समझते थे। यूं तो विद्यार्थी जीवन से ही इनका और कांग्रेस का ताल्लुक़ है, लेकिन १९२० ई० से ये खुले रूप से कांग्रेस के मैदान में आये। इस मैदान के अगुवा श्री देशबन्धु दास जी थे, सुभाष के दिल में गहरी देश-भक्ति थी। इस लिये ये थोड़े ही दिनों

में कांग्रेस के मैदान में काफ़ी मशहूर होगये। जब से सुभाष बाबू कांग्रेस में शामिल हुये, तब से ये बराबर कांग्रेस के मैदान से देश की सेवा करते जारहे हैं। कहना यह चाहिये, कि मुल्क की खिदमत में ही इन्हों ने अपनी ज़िन्दगी का ज़्यादा समय बिताया है।

१६२२ ई० के बाद जब असहयोग आन्दोलन बन्द होगया और देश के बड़े-बड़े नेता जेल से छूट कर आये, तब आज़ादी के बारे में लोगों की राय बदल गई। लोग कौन्सिलों में जाना मुल्क की भलाई के लिये बहुत अच्छा समझने लगगये। बंगाल में इस राय के अगुवा श्री देशबन्धु दास जी थे। उधर बंगाल में देशबन्धु दास थे, और इधर यू० पी० में पंडित मोती लाल जी भी इसी के लिये कोशिश कर रहे थे। सुभाष बाबू देशबन्धु दास के साथ थे। कौन्सिलों के सवाल को लेकर कांग्रेस में दो दल पैदा होगये। एक दल देशबन्धु दास का था, और दूसरा दल महात्मा गांधी का था। देशबन्धु दास कहते थे, कि कौन्सिलों में आना चाहिये, और महात्मा गाँधी कहते थे, कि कौन्सिलों में नहीं जाना चाहिये इसी समय गया में कांग्रेस का सालाना जलसा हुआ। इस जलसे में सुभाष बाबू भी शामिल हुये थे। गया की कांग्रेस में कौन्सिलों में जाने

के लिये प्रस्ताव रखा गया। इस प्रस्ताव को पास कराने के लिये सुभाष बाबू ने बड़ी कोशिश की थी। लेकिन वह न पास हो सका।

गया की कांग्रेस के बाद पंडित मोतीलाल नेहरू ने एक अलग सभा खोली। इस सभा का नाम था, 'स्वराज्य दल।' इस दल वाले कांग्रेस से अलग हो कर चुनाव की लड़ाई लड़ना चाहते थे। सुभाष बाबू देशबन्धु दास के साथ इसी दल में शामिल होगये। जब चुनाव की लड़ाई लड़ी गई, तब सुभाष बाबू ने कामयाबी के लिये बड़ी कोशिशें की थीं। लोग सुभाष बाबू को भी मेम्बरों के लिये उम्मीदवार बना कर खड़ा करना चाहते थे, लेकिन इन्हों ने इन्कार कर दिया। इन्हों ने कहा, कि मैं कौन्सिलों के बाहर रह कर ही मुल्क की अच्छी खिदमत कर सकता हूं। स्वराज्य दल के उम्मीद वारों को बंगाल में जो कामयाबी मिली थी, उस का बहुत कुछ श्रेय सुभाष बाबू को ही है। उन दिनों सुभाष बाबू के हाथों में फ़ारवर्ड' और 'बाँगलार सुथा' नाम के दो अख़बार थे। इन अख़बारों के ज़रिये सुभाष बाबू ने 'स्वराज्य दल' की अच्छी मदद की थी।

नये विचार

काँग्रेस ने अपना आन्दोलन बन्द कर दिया था।

आज़ादी की लहर एक तरह से बन्द सी होगई थी। कांग्रेस में फूट पैदा होगई थी। कुछ लोग कौन्सिलों की मेम्बरी कर रहे थे, और कुछ लोग खद्दर तथा चर्खे के प्रचार में लगे हुये थे। मुल्क में क्या होरहा है, लोग किस क़दर ग़रीबी से पिस्ते जारहे हैं, इस तरफ़ बहुत कम लोगों का ध्यान था, उन में सुभाष बाबू एक ख़ास आदमी थे। मुल्क में फैली हुइ ग़रीबी को देख कर इन का दिल कांप उठता था। मज़दूरों और किसानों की मुसीबतों को देख कर उन के दिल के अन्दर एक आंधी सी उठ खड़ी होती थी। मुल्क की आज़ादी की जो लहर बन्द हो गई थी, उस के लिये सुभाष बाबू अक्सर बेचैन रहा करते थे।

मुल्क की ग़रीबी को दूर करने के लिये सुभाष बाबू ने एक नया दल क़ायम किया। इस दल का नाम था 'युवक दल' इस दल की ओर से सुभाष बाबू ने ग़रीब किसानों और मज़दूरों की ग़रीबी मुल्क के सामने रखी। किसानों की ग़रीबी को दूर करने के लिये इन्हों ने एक स्कीम भी सरकार के सामने रख दी। मुल्क के लिये ये बिलकुल नये विचार थे। सुभाष बाबू के इन विचारों को सुन कर बहुत से आदमियों के रोंगटे खड़े होगये। कांग्रेस के कई नेताओं ने भी सुभाष बाबू के इन

विचारों के ख़िलाफ़ अपनी राय ज़ाहिर की थी। इधर यह हाल था, और उधर सुभासबाबू सरकार की आंखों में कांटे की तरह गड़ने लगे। लेकिन सुभाषबाबू ने कभी इस की परवाह न की। वे बराबर ग़रीबों, मज़दूरों और क़िसानों की सेवा करते रहे। अपने इस दल के ज़रिये सुभाष बाबू ने अपने नये विचारों का किसानों और मज़दूरों में प्रचार भी किया था। बंगाल में जो इस समय जाग्रति दिखाई दे रही है, उस का बहुत कुछ श्रेय सुभाष बाबू ही को है। बंगाल के मज़दूरों और किसानों की सुभाष बाबू ने अच्छी ख़िदमत की है। इसी लिये तो बंगाल के मज़दूर और किसान सुभाष बाबू को अपना प्राण समझते हैं।

नगर की सेवा

सुभाष बाबू के त्याग ने उन्हें लोगों के दिल में बैठाल दिया था। बंगाल ही में नहीं, सारे हिन्दुस्तान में खुले दिल से उन की देश-भक्ति और उन की सादगी की तारीफ़ की जा रही थी। हिन्दुस्तान का नवयुवक दल तो उन्हें अपना प्राण समझने लगा था। जब सारा मूल्क सुभाष बाबू की इज़्ज़त कर रहा था, तब फिर कलकत्ता नगर क्यों न करे? १९२४ ई० में जब कलकत्ता कार्पोरेशन का चुनाव हुआ, तब कलकत्ता

निवासियों ने बड़ी खुशी के साथ सुभाष बाबू को कार्पोरेशन का मेम्बर चुना।

कार्पोरेशन में सुभाषबाबू एक्जीक्यूटिव आफिसर बनाये गये थे। इस ओहदे पर भी सुभाष बाबू ने अपने त्याग का अच्छा परिचय दिया। इस के पहले उस ओहदे पर जो लोग काम करते थे, उन्हें तीन हज़ार रुपये मासिक तनख्वाह मिलती थी। लेकिन सुभाष बाबू ने सिर्फ़ डेढ़ हज़ार रुपये ही लिये। इस ओहदे पर रह कर सुभाष बाबू ने कलकत्ता नगर की अच्छी सेवा की। इस ओहदे पर सुभाष बाबू थोड़े ही दिनों तक रहे। लेकिन थोड़े ही दिनों में इन्हों ने कार्पोरेशन को एक बहुत अच्छे सांचे में ढाल दिया था।

जेलों में

सुभाष बाबू गरीबों और मज़दूरों के सच्चे मददगार हैं। गरीबों और मज़दूरों का ऐसा मददगार शायद हिन्दुस्तान में कोई न मिलेगा। कांग्रेस गरीबों और मज़दूरों की भलाइयों के बारे में थोड़ा बहुत जो कुछ सोचने लगी है, उस के एक मात्र कारण सुभाष बाबू ही हैं। सुभाष बाबू के साथ ही पंडित जवाहर लाल नहरू का भी नाम लिया जा सकता है। सुभाष बाबू कार्पोरेशन में काम करते हुये भी मज़दूरों की भलाई में लगे हुए

थे। ये ज्यों ज्यों मज़दूरों के अधिक क़रीब होते जाते थे, त्यों २ इन पर सरकार की कड़ी निगाह भी पड़ती जाती थी। अन्त में १९२४ ई० के अक्टूबर महीने में सरकार ने इन्हें गिरफ़्तार कर लिया।

सुभाष बाबू गिरफ़्तार करके अलीपुर जेल में भेज दिये गये। इन पर न कोई मुक़दमा चलाया गया, और न इन्हें सज़ा ही दी गई। अलीपुर जेल में रहते हुये भी सुभाष बाबू कार्पोरेशन और मज़दूरों की खिदमत किया करते थे। सरकार को यह सब कुछ मंजूर न था। इस लिये सुभाष बाबू अलीपुर से हटा कर बरहमपुर की जेल में भेज दिये गये, लेकिन सरकार वहां भी इन्हें न रख सकी, और ये ब्रह्मा की मांडले जेल में भेज दिये गये।

मांडले की जेल में सुभाष बाबू एक सन्यासी की तरह अपनी ज़िन्दगी बिताते थे। सन्यासी ही के भांति गेरुआ वस्त्र भी ये पहना करते थे। हमेशा दुनिया और दुनिया के दुःख-सुख पर विचार किया करते थे। इसी विचार की पुस्तकें भी ये अक्सर पढ़ा करते थे। अपना तमाम काम ये अपने ही हाथों से किया करते थे।

अजीर्ण रोग

कई महीनों तक जेलों में रहने के कारण सुभाष बाबू

की तन्दरुस्ती बहुत खराब होगई। इन्हें अजीर्ण रोग पैदा होगया। पीठ की रीढ़ में दर्द भी होने लगा। इन की बीमारी की खबर जब मुल्क को मिली, तब तमाम मुल्क बेचैन हो उठा। मुल्क के बड़े- बड़े नेता इस बात की कोशिश करने लगे, कि सुभाषबाबू छोड़ दिये जायें। बंगाल में इसी बात को लेकर ज़ोरदार आन्दोलन किया जाने लगा। सुभाष बाबू की रिहाई के लिये सरकार से कोशिशें भी की जाने लगीं। लेकिन सरकार के ऊपर कुछ भी असर न पड़ा। सरकार ने सुभाष बाबू को मागडले की जेल से 'नासिक' की सेन्ट्रल जेल में भेज दिया। पर इस से क्या हो सकता है ? सुभाष बाबू की तन्दरुस्ती में कुछ भी सुधार न हुआ। सुधार होने को कौन कहे, उन की हालत और भी ज़्यादा खराब होगई।

सुभाष बाबू की बिगड़ती हुई हालत को देख कर सरकार उन्हें छोड़ने के लिये तैयार तो होगई, लेकिन कुछ शर्तों पर। सरकार ने सुभाष बाबू के पास कुछ शर्तों के साथ एक पत्र लिखा। उन शर्तों में एक शर्त यह थी, कि अगर आप जेल से छूटते ही स्विटज़र-लैण्ड चले जायें, तो छोड़ दिये जा सकते हैं। लेकिन सुभाष बाबू ने इस शर्त पर जेल से छूटने से इन्कार कर दिया।

इन्हों ने सरकार की चिट्ठी का जवाब लिखते हुये लिखा कि यह मुझ से कभी नहीं होसकता, कि मैं जेल से छूटते ही बिना अपने देश-भाईयों से मिले हुये प्रदेश चला जाऊं ?

छुटकारे की कहानी

सुभाष बाबू ने जब सरकार की बात मानने से इन्कार करदी, तब लोग उन के बारे में तरह-तरह के ख्याल करने लगे। सरकार भी चिन्ता में पड़ गई, कि अब सुभाष बाबू को कहां और किस तरह रखना चाहिये। इसी समय विलायत की लार्ड सभा में भारत मंत्री ने एक सवाल के जवाब में कहा, कि सुभाष बाबू ६ मई को अलमोड़ा लेजाने के लिये कलकत्ता लाये जावेंगे। अखबारों में इस खबर को पढ़ कर सारा देश खुशी से नाच उठा।

इस के बाद यह मालूम हुआ, कि १२ मई को लंदन से जो जहाज़ कलकत्ता आयेगा, उसी पर सुभाष बाबू भी लाये जायेंगे। नियत समय पर हज़ारों आदमियों की भीड़ घाट पर जा पहूंची। जहाज़ आया लेकिन सुभाष बाबू न आये। लोग अधिक बेचैन हो उठे और सुभाष बाबू के बारे में तरह-तरह की बातें सोचने लगे। दूसरे दिन यह मालूम हुआ, कि शनिवार को जो

जहाज़ आयेगा, उस पर सुभाष बाबू लाये जारहे हैं। लेकिन कलकत्ता वे उतारे जायंगे या नहीं, यह ठीक से नहीं कहा जा सकता। इस के बाद ही 'फ़ारवर्ड' इत्यादि अख़बारों में छपा, कि सुभाष बाबू 'ऐसएड' जहाज़ से लाये जारहे हैं, और इतवार को ठीक बारह बजे दिन में घाट पर उतरेंगे।

इस खबर से सारे कलकत्ता शहर में खुशी का समुद्र सा छा गया। लोग रविवार के दिन दस बजे से ही घाट पर जमा होने लगे। कई हज़ार आदमी घाट पर इकट्ठे हो कर सुभाष बाबू के आने की राह देखने लगे। जहाज़ आया, लेकिन लोगों को सुभाष बाबू के दर्शन न हुये। लोग बेचैन हो उठे। जहाज़ पर आने वाले यात्रियों की जो सूची थी, उस में भी सुभाष बाबू का नाम न पाया गया। अन्त में जहाज़ पर आने वाले यात्रियों ने बतलाया, कि सुभाष बाबू इसी जहाज़ से लाये गये हैं। लेकिन वे यहां से कुछ दूरी पर जहाज़ से उतार कर नाव पर बैठा लिये गये। कहां लेजाये गये यह कोई नहीं कह सकता। सुभाष बाबू गेरुवे रंग का कपड़ा पहने हुये थे। गेरुवे रंग की धोती, गेरुवे रंग का कुर्ता और गेरुये रंग की खादी की टोपी। वे बिलकुल सन्यासी की तरह मालूम हो रहे थे।

मुसाफिरों के मुंह से इस ख़बर को सुन कर लोग और भी अधिक बेचैन हो उठे, और तरह-तरह की बातें करने लगे। लोग निराश होकर अपने-अपने घर चले गये। लेकिन जब तक लोगों को सच्ची बात न मालूम होगई, लोग यह जानने के लिये अधिक बेचैन होते रहे, कि सुभाषबाबू उतार कर कहां ले जाये गये ?

सच्ची बात

सुभाष बाबू का जहाज़ इतवार को कलकत्ता पहुंचने वाला था। शनीवार की रात को सुभाष बाबू के बड़े भाई शरद चन्द बसु के पास सरकार ने यह ख़बर भेजी, कि वे इतवार को सवेरे साढ़े आठ बजे दो डाक्टरों के साथ सुभाष बाबू को देखने के लिये तैयार रहें। इस ख़बर से यह मालूम होता था, कि सुभाष बाबू ज़रूर कलकत्ता लाये जायंगे। लेकिन इस के बाद यह मालूम हुआ, कि सरकार ने कलकत्ता से कुछ दूर पर ही सुभाष बाबू को उतार लेने का इन्तज़ाम किया है। इतवार को सवेरे शरदचन्द वसु दो डाक्टरों के साथ बैठे हुये इन्तज़ार कर रहे थे। ठीक समय के एक घन्टे बाद एक साहब आया, और शरद चन्द वसु तथा उन के दोनों डाक्टरों को अपने साथ ले गया।

यह लोग गंगा के किनारे जा कर एक नाव पर

सवार हो गये। नाव दक्षिण की ओर चल पड़ी। उस समय भी शरद चन्द वसु को यह नहीं मालूम था, कि ये कहाँ ले जाये जा रहे हैं। कुछ देर के बाद नाव एक घाट पर जा लगी। इसी समय रंगून से जहाज़ भी आ कर किनारे पर लग गया। सुभाष बाबू उसी जहाज़ पर मौजूद थे। सुभाष बाबू से कहा गया, कि वे जहाज़ से उतर कर नाव पर जा बैठें, लेकिन सुभाष बाबू ने जहाज़ से उतरने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा, कि मुझे रँगून से यह बतलाया गया है, कि मैं कलकत्ते पहुँचाया जाऊँगा। इस लिये मैं कलकत्ता जाने के पहले कहीं भी नहीं उतर सकता।

जब सुभाष बाबू उतरने के लिए राज़ी न हुए, तब पुलिस के हाकिम ने शरद चन्द बाबू से कहा, कि आप सुभाष बाबू को जहाज़ से उतारने की कृपा करें। शरद चन्द बाबू ने सुभाषबाबू को समझाया, और वे उतरने के लिये तैयार हो गये। सुभाष बाबू बीमार थे, इस लिए वे लेटे ही लेटे जहाज़ से नाव पर उतर गये। सुभाष बाबू के साथ रंगून से एक क़ैदी भी उनकी सेवा के लिए लाया गया था। सुभाष बाबू जब नासिक जेल में थे, तब यही क़ैदी उन की सेवा किया करता था। सुभाष बाबु जब जहाज़ से उतरने लगे, तब उस क़ैदी को बड़ा

दुःख हुआ। सुभाषबाबू भी उसकी जुदाई से कुछ दुखी से हो उठे थे, उन्होंने पुलिस के हाकिम से कहा, कि आपकी बड़ी मेहरबानी होगी, कि इस बेचारे क़ैदी के हाथों में अब हथकड़ी न डालेंगे। यद्यपि वही क़ैदी खूनी था, लेकिन फिर भी सुभाषबाबू की बात मान कर पुलिस के हाकिम ने उसके हाथों में हथकड़ी नही डाली।

जहाज़ से उतरने के बाद डाक्टरों ने सुभाष बाबू की तन्दुरुस्ती की देख भाल की। इसके बाद नाव कुछ और दूर पर लेजाई गई, वहां गवर्नर साहब के लिये ख़ास तौर से बनी हुई नाव पहले ही से मौजूद थी। पुलिस के हाकिम ने उस नाव को दिखा कर कहा, कि गवर्नर साहब ने सुभाष बाबू को इसी नाव पर लाने के लिए आज्ञा दी है। इस लिए अब इन्हें इस नाव पर बैठाना चाहिए। उस समय गवर्नर साहब की इस सदिच्छा को सुन कर लोगों ने उनकी बड़ी तारीफ़ की थी।

छुटकारा

इसके बाद सुभाषबाबू के स्वास्थ्य की परीक्षा की गई। परीक्षा करने वालों में दो सरकारी डाक्टर थे, और दो सुभाषबाबु के निजी। सुभाषबाबु की हालत अधिक ख़राब थी। उन दिनों गवर्नर साहब दार्जिलिंग में थे।

डाक्टरों ने सुभाषबाबू के स्वास्थ्य की परीक्षा करके तार से गवर्नर साहब को ख़बर दी, गवर्नर ने उस तार को पा कर तार से ही सुभाषबाबु को छोड़ने का हुक्म दे दिया।

सुभाषबाबु शरदचन्द के सपुर्द कर दिये गये। सुभाष बाबु अपने एलगिन रोड वाले बंगले में लाये गए सारे शहर में बिजली की तरह यह खबर फैल गई। लोग खुशी में उछल पड़े। और दल के दल सुभाषबाबू के दर्शनों के लिये उनके बंगले की ओर दौड़ आये। सुभाषबाबु बीमार होकर चारपाई पर पड़े थे, उनका शरीर सूख कर काँटे की तरह हो गया था। जिस ने सुभाषबाबु को इस हालत में देखा, उसी की आंखों से आंसू निकल पड़े थे।

सुभाष बाबु की बीमारी से सारा देश चिन्तित हो उठा। सारे देश में सुभाषबाबु के स्वास्थ्य के लिये भगवान से प्रार्थनायें की गईं। बड़े-बड़े नेताओं ने सभायें करके सुभाषबाबु की तन्दुरुस्ती के लिये भगवान से प्रार्थना की थी। सच्चे मन से की हुई प्रार्थना कभी खाली नहीं जाती। मुल्क की प्रार्थना भगवान ने सुनी, और सुभाषबाबु अच्छे होगये। कुछ दिनों में लगातार इलाज के बाद उनकी सारी तकलीफ़ दूर होगई। मुल्क ने

फिर सुभाषबाबु को अपने नेता की शकल में देखा। उस समय मुल्क को कितनी खुशी हुई होगी। क्या कोई ठीक-ठीक अन्दाज़ा लगा सकता है?

सेवा में

बीमारी से अच्छा होने के बाद सुभाषबाबु फिर मुल्क की सेवा में लग गये। अपने जिस काम को अधूरा छोड़ कर सुभाषबाबु जेल गये थे, उसी को इन्होंने फिर उठाया। इनका यह काम था, मज़दूरों की सेवा। मज़दूरों और किसानों की सेवा में सुभाषबाबु को बड़ा सुख मिलता है। इनका यह विचार है, कि जब तक हिंदुस्तान के किसानों और मज़दूरों की हालत न सुधरेगी, तब तक हिंदुस्तान आज़ाद नहीं हो सकता। कांग्रेस में भी सुभाषबाबु किसानों और मज़दूरों की भलाई के लिये ज़ोरदार कोशिशें किया करते हैं।

इस बार सुभाषबाबु ने मज़दूरों की कई सभायें क़ायम कीं। इसके साथ ही बंगाल की कांग्रेस कमेटियों को भी इन्होंने संगठित किया। मज़दूरों की बड़ी बड़ी सभाओं में सुभाषबाबू के लेक्चर हुए। सुभाषबाबु के लेक्चरों से मज़दूरों में एक जोश सा फैल गया। वे अपने हक़ों को समझने लगे, और उसके लिये आवाज़ भी उठाने लगे। सुभाषबाबू के इस काम से बहुत से

ही आज़ादी का प्रस्ताव कलकत्ता की कांग्रेस में न पास हो सका, महात्मा गांधी ने सुभाषबाबू और उनके साथियों को समझा कर एक साल के लिए शान्त कर दिया।

सज़ा

सुभाषबाबू सच्चे देश-भक्त हैं। मुल्क की आज़ादी के लिये इनके दिलमें बहुत बड़ी बेचैनी है। अपनी इसी बेचैनी के कारण ये मुल्क के हर काम में सब से आगे जा पहुँचते है। इसी लिए जब मुल्क के नेता जेलों के बाहर रहते हैं। सुभाषबाबू जेल में दिखाई देते हैं। जेलों में ही सुभाषबाबू की ज़िन्दगी का ज़्यादा समय बीता है।

कलकत्ता की कांग्रेस के बाद, जब मुल्क में चारों ओर शान्ति थी, उस समय भी सुभाष बाबू को जेल जाना पड़ा। कलकत्ता की कांग्रेस के कुछ ही दिनों बाद मशहूर नेता यतीन्द्रनाथ दास की मौत होगई। इनकी मौत पर देश के कोने-कोने में शोक छा गया था, और लोगों ने सरकार के ऊपर अपनी नाराज़गी भी ज़ाहिर की थी। इस का कारण यह था, कि यतीन्द्रनाथ की तन्दुरुस्ती ख़राब होजाने पर भी सरकार ने उन्हें जेल से न छोड़ा, और वे जेल ही में मर गये।

कलकत्ता में यतीन्द्रनाथ की अर्थी का बहुत बड़ा

जुलूस निकाला गया था। सुभाष बाबू भी इस जुलूस में शामिल हुये थे। कलकत्ता की एक सभा में सुभाष बाबू ने यतीन्द्रनाथ की वीरता की तारीफ़ करते हुये सरकार की बड़ी निन्दा की। सरकार सुभाष बाबू पर पहले ही से नाराज़ थी। इस मौक़े पर की गई निन्दा के कारण सरकार और भी ज़्यादा नाराज़ होगई और सुभाष बाबू गिरफ़्तार कर लिये गये। इस पर अदालत में मुक़दमा चलाया गया, और इन्हें छः महीने की सज़ा दी गई।

लाहौर की कांग्रेस

एक साल के बाद लाहौर में कांग्रेस का सालाना जलसा हुआ। इस जलसे के सभापती पंडित जवाहर लाल नहरू थे। कलकत्ता में कांग्रेस ने यह तै किया था, कि अगर सरकार एक साल में हिन्दुस्तान को औपनिवेशिक स्वराज्य न देदेगी तो पूरी आज़ादी का प्रस्ताव पास करदिया जायगा। इस साल का समय इन्तज़ारी में बीत गया। लोग बड़ी उत्सुकता से सरकार की ओर देखते रहे। लेकिन नतीजा कुछ न हुआ। अन्त में लाहौर में कांग्रेस ने पूरी आज़ादी का प्रस्ताव पास कर दिया।

लाहौर की कांग्रेस बड़ी महत्वपूर्ण थी। यह इस लिये और भी कि इसी में पूरी आज़ादी का प्रस्ताव पास किया गया था। लाहौर की कांग्रेस में आज़ादी का जो

प्रस्ताव पास हुआ था, उसे पास कराने में सुभाष बाबू का विशेष हाथ था। इस प्रस्ताव के पास होने पर सुभाष बाबू और इनके साथियों को बड़ी खुशी हासिल हुई थी।

लाहौर की कांग्रेस में सुभाष बाबू ने कांग्रेस के सामने अपनी एक स्कीम भी रखी थी। इस स्कीम के मुताबिक़ वे मुल्क में कांग्रेस की अदालतें और अहिन्सक सेना क़ायम करना चाहते थे। सुभाष बाबू ने इसके लिये एक बड़ा ज़ोरदार लेक्चर भी दिया था। सुभाष बाबू के इन विचारों को सुन कर हर एक आदमी ताज्जुब में पड़ गया, और खुले दिल से सुभाष बाबू की देश–भक्ति की तारीफ़ करने लगा। कांग्रेस ने सुभाष बाबू की स्कीम मँजूर तो न की, लेकिन अपनी इस स्कीम से सुभाषबाबू देश के अधिक क़रीब होगये। देश के कोने कोने में उनका नाम लिया जाने लगा। मज़दूर और किसान इन्हें अपना प्राण समझने लगे। नवजवानों के ये सब से प्यारे नेता बन गये।

नमक आन्दोलन

लाहौर की कांग्रेस के बाद ही महात्मा गांधी ने बड़े ज़ोरों से आज़ादी की लड़ाई छेड़ दी। इस लड़ाई में सब से पहले पहल सरकार का नमक क़ानून तोड़ा गया

था। महात्मा गांधी के हुक्म से हिन्दुस्तान के कोने-कोने में नमक क़ानून तोड़ा जाने लगा। हिन्दुस्तान में चारों ओर जोश की एक लहर सी दौड़ पड़ी।

दूसरे सूबों की तरह बंगाल में भी आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। बंगाल के आन्दोलन के नेता सुभाष बाबू थे। सारा बंगाल सुभाषबाबू के इशारों पर नाचने के लिये तैयार था। बंगाल ही क्यों, तमाम हिन्दुस्तान में उन की आवाज़ एक ख़ास आवाज़ समझी जाती थी। सुभाष बाबू बड़ी लगन के साथ आज़ादी की लड़ाई को आगे बढ़ा रहे थे। भला सरकार यह कैसे सहन कर सकती थी? सुभाष बाबू गिरफ़्तार करके जेल में डाल दिये गये। उन दिनों जितने लोग नमक क़ानून तोड़ते थे, सब पर क़ायदे से मुक़दमा चलाया जाता था, और सब को किसी निश्चित समय की सज़ा भी दी जाती थी। लेकिन सुभाष बाबू पर न तो मुक़दमा चलाया गया, और न उन्हें किसी ख़ास समय तक की सज़ा ही दी गई। इसका सबब यह था, कि सरकार सुभाष बाबू से अधिक डरती थी। मज़दूरों, किसानों, ग़रीबों और नवजवानों पर सुभाष बाबू के असर को देख कर सरकार उन्हें आशंका की निगाह से देखती थी। इसी लिये उसने उन्हें अनिश्चित् काल के लिये जेल में डाल दिया।

सुलह

सत्याग्रह की लड़ाई बड़े ज़ोरों में चल रही थी। कई हज़ार आदमी जेलों में जाचुके थे। हिन्दुस्तान की तमाम जेलें सत्याग्रही क़ैदियों से भर गई थीं। सभी बड़े बड़े नेता गिरफ़्तार करके जेलों में पहुंचा दिये गये थे। सरकार ज्यों-ज्यों आन्दोलन को दबाने की कोशिश करती थी, त्यों-त्यों आन्दोलन और भी ज़ोर पकड़ता जाता था। इसी वक्त सरकार और काँग्रेस में सुलह की बात-चीत चली। सुलह कराने वाले सप्रू और जयकर थे। सप्रू और जयकर की कोशिशों से काँग्रेस और सरकार में सुलह होगई। इसी सुलह के मुताबिक़ कांग्रेस ने आज़ादी की लड़ाई बन्द करदी। और सरकार ने सत्याग्रही क़ैदियों को छोड़ दिया।

सुभाषबाबू भी जेल से छुट कर बाहर आये। समझौते के मुताबिक़ गोलमेज़ काँफ़रेंस में शामिल होने के लिये महात्मा गांधी जब विलायत गये। महात्मा गांधी विलायत ही में थे, कि हिन्दुस्तान में फिर आज़ादी की लड़ाई छिड़ गई। जो लोग जेलों से छुट कर बाहर आये थे, वे फिर गिरफ़्तार होने लगे। महात्मा गांधी के आते आते आन्दोलन ने फिर ज़ोर पकड़ लिया। महात्मा जब विलायत से लौट कर आये, तब वे भी गिरफ़्तार

कर लिये गये। आन्दोलन कुछ दिनों तक तो चला, इस के बाद ठंडा होगया। महात्मा गांधी ने कांग्रेस को सलाह दी, कि आंदोलन बंद कर दिया जाय। सुभाष बाबू ने महात्मा गांधी की इस सलाह का ज़बर्दस्त विरोध किया था। लेकिन फिर भी महात्मा गांधी की सलाह से आन्दोलन बन्द ही कर दिया।

गिरफ्तारी

कांग्रेस ने आज़ादी की लड़ाई बन्द कर दी थी। महात्मा गांधी इत्यादि कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता अछूतों की हालत सुधारने में लगे हुये थे। गरम दल वाले महात्मा गांधी की इस नीति के बहुत खिलाफ़ थे। महात्मा गांधी ने आज़ादी की लड़ाई जो बंद करदी थी, उसके लिये बहुत से लोग महात्मा जी पर दोष लगा रहे थे। सुभाष बाबू भी इस कथन में थे, कि आज़ादी की लड़ाई बन्द न की जाय। इसी लिये जब कांग्रेस ने आज़ादी की लड़ाई बंद करदी थी, ये बराबर आज़ादी के लिये कोशिशें करते रहे।

इन्हीं दिनों मथुरा में नवजवान भारत सभा का सालाना जल्सा हुआ इस जल्से के सभा-पति सुभाष बाबू बनाये गये थे। इस जल्से में मुल्क के बहुत से नवजवान शामिल हुये थे। जल्से में सुभाष बाबू का बड़ा ज़ोरदार

लैक्चर हुआ था। उस लेक्चर का नवजवानों पर काफ़ी असर भी पड़ा था।

सुभाषबाबू के इस लेक्चर से सरकार का दिल फिर कांप उठा। सुभाषबाबू मज़दूरों और किसानों के नेता हैं। मथुरा की नवजवान भारत सभा में उन्हों ने जो लेक्चर दिया था, वह भी मज़दूरों और किसानों की भलाई ही के बारे में था। इस लिये सरकार ने फिर सुभाष बाबू को गिरफ़्तार करके जेल में पहुंचा दिया।

जेल में

सरकार सुभाष बाबू को सब से ज़्यादा खतरनाक आदमी समझती है। इसी लिये वह सुभाष बाबू को ज़्यादातर जेल में अपना महमान बना कर के ही रखती है। सुभाषबाबू जब २ गिरफ़्तार हुये हैं, उन पर न तो मुक़दमा चलाया गया है, और न उन्हें किसी खास वक्त की सज़ा दी गई है। शायद ही सुभाष बाबू के बारे में दो-एक बार ऐसा किया गया है। इस बार भी सुभाषबाबू पर मुक़दमा वगैरा कुछ भी नहीं चलाया गया। वे पकड़ कर एक अनिश्चित काल के लिये जेल में डाल दिये गये।

सुभाष बाबू पहले अलीपुर जेल में रखे गये। इसके

बाद वहां से सिडनी भेज दिये गये। सिवनी की जेल में इनकी तन्दरूस्ती ज़्यादा ख़राब होगई। इन्हें अजीर्ण रोग होगया, और पीठ में दर्द भी होने लगा। पीठ के दर्द के साथ ही साथ ज्वर भी आने लगा। सुभाषबाबू की बीमारी का हाल जब लोगों को मालूम हुआ, तब लोग बहुत घबड़ाये। लोग इस बात की कोशिश करने लगे, कि सुभाषबाबू छोड़ दिये जायें। लेकिन सरकार ने सुभाष बाबू को न छोड़ा। हां सरकार की ओर से उनके इलाज के लिये अच्छा इन्तज़ाम कर दिया गया। सुभाषबाबू इलाज के लिये सिडनी से लखनऊ लाये गये। लखनऊ में कुछ दिनों तक इनका इलाज होता रहा। लेकिन कुछ फ़ायदा न हुआ। जब लखनऊ में कुछ फ़ायदा न हुआ, तब सरकार ने इन्हें भुवाली भेज दिया।

मगर भुवाली में भी सुभाषबाबू की तबीयत न सुधरी। इनकी तन्दरूस्ती दिनों दिन ज़्यादा ख़राब होने लगी। मुल्क में इनकी रिहाई के लिये ज़ोरदार कोशिश होने लगी। सरकार भी चिन्ता में पड़ गई। सुभाषबाबू की गिरती हुई तन्दरुस्ती को देख कर सरकार उन्हें इस शर्त पर छोड़ने के लिये तैयार हुई, कि वे छूटते ही विदेश चले जायें। लेकिन सुभाषबाबू ने इस शर्त पर छुटने स इन्कार कर दिया। लोगों ने सुभाषबाबू को बहुत

समझाया, और उन्हों ने सरकार की शर्तें मान ली।

तीन साल तक

सुभाष बाबू जेल से छूटते ही हवाई जहाज़ से स्विटज़रलैण्ड चले गये। स्विटज़रलैण्ड में इन्हों ने अपने रोगों का इलाज कराया। वहां इन्हें बहुत कुछ फ़ायदा पहुंचा। स्विटज़रलैण्ड में कुछ दिनों तक रहने के बाद ये रूम चले गये, और फिर वहां से आयरलैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी, इत्यादि देशों की इन्हों ने यात्रा की।

सुभाष बाबू तीन साल तक विदेश में रहे। इन्हों ने विदेशों के बड़े-बड़े आदमियों से मुलाक़ात की। इन बड़े आदमियों में मुसोलिनी और डीबेलोरा का नाम ख़ास तौर से लिखा जा सकता है। सुभाषबाबू इन लोगों से मिल कर बहुत खुश हुये थे। विदेशों में सुभाषबाबू ने कई सभाओं में लैक्चर भी दिये थे। सुभाषबाबू ने अपने हर एक लैक्चर में लोगों के सामने हिन्दुस्तान की ग़रीबी रखी थी। सुभाष बाबू के लैक्चर विदेशों में काफ़ी पसन्द किये गये थे। बड़े-बड़े अन्ग्रेज़ों ने खुले दिल से इनकी विद्वत्ता की तारीफ़ की थी।

सुभाष बाबू जब अच्छे होगये, तब वे हिन्दुस्तान लौट आना चाहते थे। लेकिन सरकार ने उन्हें न आने दिया। इसी लिये तीन साल तक उन्हें विदेश में इधर

उधर घूमना पड़ा। लेकिन विदेशों में भी सुभाष बाबू बराबर अपने मुल्क की सेवा करते रहे। सच बात तो यह है, कि सुभाष बाबू की आंखों के सामने हमेशा मुल्क की तसवीर घूमती रहती है। वे अब तक जहां रहे हैं, बराबर मुल्क की ख़िदमत करते हुये पाये गये हैं।

अपने घर में

सुभाषबाबू जिन दिनों विदेश में थे, इन के पिता बाबू जानकी नाथ बीमार पड़गये। वे काफ़ी बूढ़े हो गये थे उनकी ह़ालत दिनों दिन ज़्यादा ख़राब होती जा रही थी। वे मरने के पहले एक बार सुभाषबाबू को देखना चाहते थे। सुभाषबाबू को इसकी ख़बर दीगई। सुभाष बाबू को विदेश से आने देने के लिये सरकार से भी सिफ़ारिशें की गईं। जानकी नाथ की हालत अधिक बिगड़ती हुई देख कर सरकार सुभाषबाबू को इस शर्त पर आने देने के लिये तैयार हुई, कि वे अपने पिता से मिल कर फिर विदेश चले जायें।

सुभाषबाबू को पिता से मिलना था। इस लिये उन्हों ने सरकार की शर्त मंजूर करली। लेकिन ईश्वर को यह मंजूर न था, कि पिता पुत्र एक दूसरे से मिलें। सुभाषबाबू के आने से पहले ही बाबू जानकी नाथ की मृत्यु हो गई। पिता की मृत्यु से सुभाष बाबू को बड़ा

दुःख हुआ। दुःख इस लिये और हुआ, कि वे मरती समय उन्हें देख न सके।

सुभाषबाबू विदेश से चल कर हिन्दुस्तान आये और सीधे घर गये। उन दिनों ये बहुत दुखी थे पिता की जुदाई की चोट इन्हें काफ़ी तकलीफ़ देरही थी। पर वश क्या था? सुभाषबाबू एक महीने तक अपने घर में रहे। जब तक ये यहां रहे, बराबर राजनीति से अलग रहे। इन्हों ने सरकार से यह वायदा किया था, कि मैं राजनीति पर किसी से कुछ भी बात-चीत न करुंगा। सुभाषबाबू ने अपने किये हुये वायदे का अच्छी तरह पालन किया। ये एक महीने के लिये छोड़े गये थे। जब एक महीने का समय पूरा होगया, तब वे फिर विदेश चले गये।

फिर गिरफ्तार

सुभाषबाबू की तबीयत विदेश जाने की न थी। लेकिन सरकार से जो वायदा किया था, उस के कारण ये मजबूर थे। ये विदेश चले तो गये, लेकिन विदेश में इन का मन न लगता था। मुल्क और मुल्क के आदमियों की याद इन्हें बराबर बेचैन किया करती थी। इन्हें ये बहुत बुरा लगता था, कि कोई आदमी अपने मुल्क में न जाने पाये। भीतर ही भीतर ये दुखी होरहे थे लेकिन

फिर भी चुप थे।

इन्ही दिनों लखनऊ में कांग्रेस का सालाना जलसा हुआ। पंडित जवाहरलाल नेहरु इस के सभा पति थे। पंडित जी की यह इच्छा थी, कि इस बार सुभाषबाबू कांग्रेस के प्रधान मंत्री बनाये जायें। सुभाषबाबू को तार के ज़रिये ख़बर भी दी गई। इस ख़बर से सुभाषबाबू के मन में जोश की एक लहर सी दौड़ पड़ी। वे सरकार की परवाह न करके अपने देश के लिये रवाना होगये।

कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पास करके इस बात की कोशिश की, कि सुभाषबाबू पर जो रोक लगी है, वह हटाली जाय। मुल्क के बड़े-बड़े नेताओं ने भी सरकार को यही सलाह दी थी। लेकिन सरकार पर कुछ भी असर न पड़ा। सुभाष बाबू हिन्दुस्तान आते ही गिरफ़्तार कर लिये गये। ये गिरफ़्तार करके आर्थर जेल में रखे गये। इस के बाद सिडनी भेज़ दिये गये। क़रीब डेढ़ साल तक सुभाष बाबू जेल में रहे। इनकी तन्दरुस्ती में जो कुछ सुधार हुआ था, वह फिर बिगड़ गया, और ये फिर बीमार रहने लगे।

रिहाई

सन् १६३७ ई० में कांग्रेस ने एक नये युग में क़दम रखा। अर्थात् कौन्सिलों के चुनाव में कांग्रेस ने हिस्सा

लिया, सारे देश में कांग्रेस की ओर से कौन्सिल चुनाव की लड़ाई लड़ी गई। छः सूबों में कांग्रेस को काफ़ी कामयाबी मिली। इस कामयाबी के बाद छः सूबों में कांग्रेस की मिनिस्ट्री क़ायम हुई। इस समय सात सूबों में कांग्रेस हुकूमत कर रही है।

चुनाव के बाद मन्त्री पद ग्रहण के सवाल को लेकर कांग्रेस में काफ़ी मत-भेद खड़ा होगया था। गरम दल वाले इसके बिलकुल ख़िलाफ़ थे, कि मंत्री-पद ग्रहण किया जाये। लेकिन नरम दल इसके पक्ष में था। सुभाष बाबू की राय मन्त्री-पद के बिलकुल ख़िलाफ़ थी। इसी बात को लेकर दिल्ली में कांग्रेस की एक बड़ी सभा हुई। जिन दिनों यह सभा होरही थी, सुभाषबाबू जेल से छोड़ दिये गये। सुभाषबाबू की रिहाई का समाचार जब लोगों को मालूम हुआ, तब लोग खुश हुये।

आख़िर नरम दल वालों की जीत हुई। कांग्रेस ने महात्मा गांधी की सलाह को ठीक मान कर मन्त्री पद ग्रहण करने की राय देदी। सुभाषबाबू और पंडित जवाहरलाल नेहरू इत्यादी नेता इस के बिलकुल ख़िलाफ़ थे। लेकिन जब कांग्रेस ने पास कर दिया, तब उन्हें भी यह बात माननी ही पड़ी। इसी के मुताबिक़ सात सूबों में कांग्रेस की मिनिस्ट्री क़ायम की गई।

फिर विदेश के लिये

लगातार जेल में रहने के कारण सुभाषबाबू की तन्दरुस्ती अधिक ख़राब होगई थी। इस लिये जेल से छूटने पर ये अपनी तन्दरुस्ती को सुधारने में लग गये। ये पुरी चले गये, पुरी में कुछ दिनों तक रहने के बाद ये डलहौज़ी गये। डलहौज़ी जाते समय इलाहाबाद में भी उतरे थे। इस समय इलाहाबाद की एक सभा में इनसे बोलने के लिये प्रार्थना की गई थी। इन्हों ने बहुत भीड़ के सामने उठ कर केवल दो शब्द कहे थे। उन्हों ने कहा था, कि मैं इस समय बीमार हूं। अच्छा होने पर फिर आप लोगों की सेवा करूंगा।

उस सभा में ज़्यादातर आदमी सुभाषबाबू ही के दर्शनों के लिये गये थे। सुभाषबाबू की बिगड़ती हुई तन्दरुस्ती को देख कर लोगों को काफ़ी दुःख भी हुआ था। डलहौज़ी जाते समय कानपुर, दिल्ली और लाहौर में इनका बड़ा धूम धाम का स्वागत किया गया था। डलहौज़ी के डाक्टर धर्मवीर के पास सुभाष बाबू ने अपना इलाज कराया, पर कोई विशेष फ़ायदा न हुआ। जब फ़ायदा न हुआ, तब ये कलकत्ता लौट गये, और वहीं अपना इलाज कराने लगे।

बीमारी के दिनों में भी सुभाष बाबू बराबर मुल्क

की ख़िदमत में लगे रहे। इन्हीं दिनों कलकत्ता में कार्य-समिति का अधिवेशन हुआ था। सुभाष बाबू ने कार्य-समिति की इस बैठक में बंगाल के राजनीतिक बन्दियों की रिहाई के लिये प्रस्ताव पास कराया था। सुभाषबाबू ने ही महात्मा गांधी जी के ध्यान को इस ओर आकर्षित किया था।

सुभाषबाबू बराबर अपना इलाज कराते रहे। लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ। अन्त में लोगों ने इन्हें यूरोप जाने की सलाह दी। ये अपने मुल्क को छोड़ना नहीं चाहते थे, लेकिन तन्दरुस्ती के लिये इन्हें फिर अपने मुल्क को छोड़ना पड़ा। नवम्बर के महीने में ये युरोप चले गये। क़रीब दो ढ़ाई महीने तक सुभाषबाबू इंगलैण्ड तथा दूसरे देशों में रहे। सब से पहले ये वियाना और स्विटज़रलैण्ड गये थे। वियाना में इन्हों ने अपना इलाज कराया था। इस बार की यात्रा में भी सुभाषबाबू ने बड़े-बड़ लोगों से मुलाक़ात की थी। आयरलैण्ड में अध्यक्ष डीवेलेरा से भी ये मिले थे। अन्त में जब तन्दरुस्ती ठीक होगई, तब ये हवाई जहाज़ से हिन्दुस्तान लौट आये।

कांग्रेस के सभापति

सुभाष बाबू देश के सच्चे नेता हैं। मुल्क के लिये

इन्हों ने बड़ी-बड़ी तकलीफ़ें उठाई हैं। इन की जिन्दगी का अधिक समय जेलों ही में बीता है। मुल्क की ख़िदमत के आगे इन्होंने अपनी तन्दरुस्ती की भी उपेक्षा की है। मुल्क की ख़िदमत के लिये ये एक तपस्वी की तरह ज़िंदगी बिता रहे हैं। इनकी तपस्या बड़ी अपूर्व है। मुल्क के लिये जैसी इन्हों ने तपस्या की है, वैसी तपस्या कांग्रेस के मैदान में बहुत कम लोगों ने की है। सुभाष बाबू की तपस्या ही का फल है, कि आज तमाम मुल्क में ज़ोरों से उनका नाम लिया जारहा है।

सुभाष बाबू जब इंगलैण्ड में थे, उसी समय हिन्दुस्तान में कांग्रेस के सभापति चुनने का सवाल पेश हुआ। इस साल कांग्रेस का सालाना जलसा हरिपुरा में होने जारहा था। कई नाम देश के सामने पेश किये गये थे। उन में एक नाम सुभाषबाबू का था। तमाम मुल्क ने सुभाष बाबू को ही कांग्रेस का सभापति चुना।

सुभाष बाबू के सभापतित्व में हरिपुरा में कांग्रेस का सालाना जलसा हुआ। जलसे में सुभाष बाबू की बड़ी धूम-धाम से सवारी निकाली गई थी। हरिपुरा काँग्रेस के सभापति पद से सुभाषबाबू ने एक बहुत बड़ा जोशीला लैक्चर दिया था। वह लैक्चर जोशीला होने के साथ ही साथ बहुत ही विद्वत्ता पूर्ण भी था।

एक साल

हरिपुरा कांग्रेस के बाद एक साल तक सुभाष बाबू बराबर देश की सेवा में लगे रहे। इन्होंने कांग्रेस की ताक़त को बढ़ाने के लिये मुल्क का दौरा किया। सुभाष बाबू अपने दौरे में जहां-जहाँ गये, उन्होंने लोगों को काँग्रेस की ताक़त बढ़ाने की सलाह दी। सुभाषबाबू संघशासन के बहुत ही खिलाफ़ हैं। इन्हों ने ही कांग्रेस की कार्य-समिति पर दबाव डाल कर संघ शासन के खिलाफ़ ज़ोरदार प्रस्ताव पास कराये हैं।

आसाम में कांग्रेस की जो मिनिस्ट्री क़ायम हुई है, इसके लिये सुभाष बाबू ने बड़ी ज़बर्दस्त कोशिश की। कहना चाहिये, कि सुभाष बाबू ही की कोशिशों से आसाम में कांग्रेस की मिनिस्ट्री बन सकी है। इस एक साल के समय में सुभाष बाबू ने हिन्दु-मुसलिम एकता के लिये भी ज़ोरदार कोशिश की है। इनका और मिस्टर जिना का काफ़ी अर्से तक इसी के संबन्ध में पत्रव्यवहार होता रहा है। यद्यपि यह मसला हल न होसका, लेकिन सुभाष बाबू दिल से चाहते हैं, कि यह मसला किसी न किसी तरह हल होजाये।

सुभाष बाबू मुल्क की जितनी खिदमत करना चाहते हैं। उतनी नहीं कर पाते हैं। इसका कारण यह है, कि

वे अक्सर बीमार रहते हैं। जेलों में रहने के कारण उन की तन्दरुस्ती ख़राब होगई है। समय-समय पर इस का कुछ न कुछ असर हो ही जाता है। इस एक साल के समय में सुभाष बाबू कई बार बीमार होचुके हैं। भगवान् की दया से वे इस समय अच्छे हैं।

त्रिपुरी कांग्रेस

इस साल १९३९ ई० में कांग्रेस का सालाना जलसा त्रिपुरी में हुआ। इस त्रिपुरी कांग्रेस के भी सभापति सुभाष बाबू ही चुने गये थे। इस बार के चुनाव से लोगों को अच्छी तरह यह मालूम होगया है, कि देश पर सुभाषबाबू का कितना असर है। देश के बड़े-बड़े नेता, जब कि सुभाषबाबू के सभापति चुने जाने के ख़िलाफ़ थे, ख़िलाफ़ ही नहीं थे, बल्कि उन्हों ने इस के लिये ज़ोरदार कोशिशें भी की थीं; मगर फिर भी सुभाषबाबू सभापति चुने गये, और चुने गये काफ़ी वोटों से। इसे लोग चाहे जो समझें, मगर मैं तो यही कहूंगा, कि यह सुभाष बाबू की तपस्या का फल है। सुभाषबाबू ने मुल्क के लिये जो तकलीफ़ें उठाई हैं, उन्हें देखते हुये यह कहा जासकता है, कि मुल्क ने इस बार भी अपनी बागडोर सुभाषबाबू के हाथ में देकर बहुत उचित ही किया है।

मार्च में कांग्रेस का सालाना जलसा त्रिपुरी में हुआ। सुभाषबाबू उसके सभापति थे। इस बार सुभाष बाबू के सभापति होजाने से नरम दल वालों में खलबली पैदा होगई है। महात्मा गांधी तक कुछ ख़िलाफ़ से दिखाई देरहे थे। महात्मा गांधी के कहने पर सुभाषबाबू ने कांग्रेस के सभापतित्व के पद को त्याग दिया और कांग्रेस में दो पार्टियों में फूट होने से रोक दिया।

बच्चौ यह कितना ऊंचा बलिदान है।

राष्ट्र-रत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद
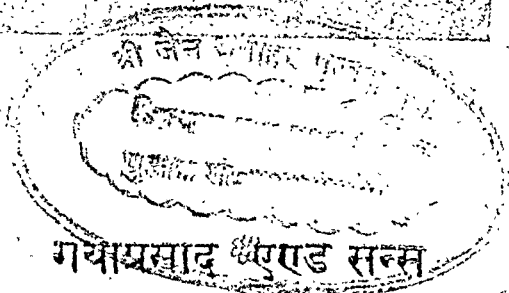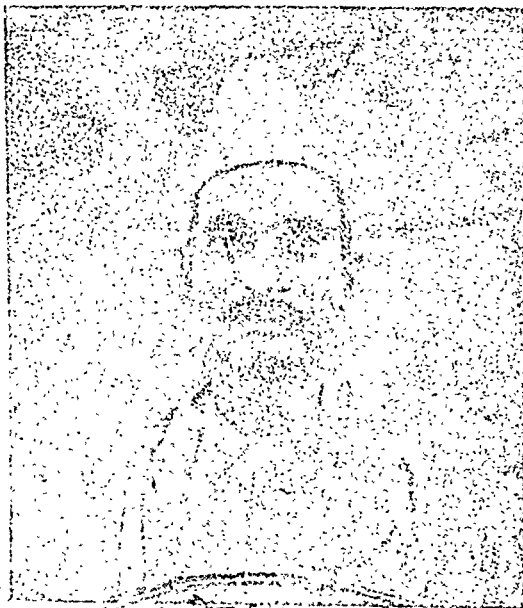
गयाप्रसाद एण्ड सन्स

पुस्तक प्रकाशक, आगरा

राष्ट्र-रत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद

[मुख्य मुख्य घटनाओं के उल्लेख सहित
सर्वाङ्गपूर्ण जीवन चरित्र]

लेखक
श्री० सरदारसिंह "सैनिक"

गयाप्रसाद एण्ड सन्स
पुस्तक प्रकाशक व विक्रेता
आगरा

१८३८] [मूल्य ।)

राष्ट्ररत्न राजेन्द्रप्रसाद

पूर्व पुरुष और जन्म

वास्तव में देखा जाय तो महापुरुषों का जीवनचरित्र ही संसार का सच्चा इतिहास है। बड़े-बड़े नेता ही उन धाराओं अथवा नियमों में जीवन प्रदान करनेवाली शक्ति डालकर उसको नवीन रूप में जनता के सम्मुख रख कर अपना उचित स्थान क़ायम करते हैं। वे साधारण जनसमुदाय की भाँति लकीर के फ़क़ीर नहीं होते। महापुरुष लोकमर्यादा का ध्यान रखते हुए भी जिस राह पर चलते हैं, वही राह दूसरों को अनुकरणीय होकर पथ-प्रदर्शन का ज़रिया बन जाती है। लोग उनके पद-चिन्हों पर चलने में ही अपना कल्याण समझते हैं। प्रत्येक महापुरुष का जीवन, चाहे वह वीर विजयी सेनापति हो या समाज-सुधारक, कवि हो अथवा धार्मिक नेता, वह सदैव दूसरों के लिए एक विशेष संदेश रखता है। महापुरुष अपने जीवन के साथ एक विशेष घटना लाते हैं और अपना कर्त्तव्य पूरा करके अमर पद को प्राप्त कर संसार से कूच कर

जाते हैं। महापुरुषों को परमेश्वर साधारण-सी बात में सत्य का साक्षात् कराके उनको कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ़ कर देता है। संसार में भला ऐसा कौन होगा जिसने अपने जीवन में शव को श्मशान ले जाते हुए न देखा हो; परन्तु कपिलवस्तु के राजकुमार गौतम ने शव ले जाते देखकर केवल राज-सिंहासन ही नहीं त्यागा, बल्कि सभी सांसारिक सुखों को लात मार कर संन्यास का आश्रय ले संसार में अक्षय कीर्ति प्राप्त की। दुःखों से भरी दुनिया में मनुष्य को वज्राघात से मरते किसने नहीं देखा; किन्तु महात्मा ल्यूथर ने एक ऐसी घटना को देखकर संसार को तिलाञ्जलि दे दी, और धर्म का आश्रय लिया। राम-मोहनराय से पूर्व भला सतियों को धधकती चिता पर जलते हुए किसने नहीं देखा था, मगर उनमें राममोहनराय ही केवल ऐसे निकले जिन्होंने सती होने के भीषण दृश्य को देख प्रतिज्ञा की कि जब तक सती-प्रथा को न मेट दूँगा तब तक दम नहीं लूँगा।

संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, यदि उनके जीवन की घटनाओं पर ध्यान दिया जाय तो उनका मूल मंत्र सहृदयता, समानता, समवेदना और स्वतंत्रता ही जान पड़ता है। महात्मा बुद्ध के जीवन का प्रधान भाव था 'विश्व-मैत्री', आत्म वीर सुकरात का 'अपने को समझो', ईसा का 'पृथ्वी पर स्वर्ग-राज्य', मुहम्मद का भाव था 'केवल परमेश्वर की पूजा', चैतन्यदेव का 'भक्ति से मुक्ति', महात्मा गान्धी का प्रधान भाव है 'अहिंसा',

उसी प्रकार हमारे चरित्रनायक डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद का प्रधान भाव 'सादगी से ग़रीबों की सेवा करना' ही है।

सर विलियम वेडरबर्न कहते हैं कि "नौकरशाही ने केवल नई सुविधाओं के रोकने में ही अपनी तरफ़ से कोई कसर नहीं रक्खी, बल्कि जब-जब मौका मिला उसने पिछले विशेषाधिकार छीन लिये, जैसे कि प्रेस की स्वाधीनता, सभायें करने का अधिकार, और विश्व-विद्यालयों की स्वतंत्रता।" सर विलियम लिखते हैं, "एक तो ये अशुभ और प्रतिगामी क़ानून, दूसरे प्राचीन रूस के समान पुलिस का-सा दमन। इससे लार्ड लिटन के समय में भारत में एक क्रान्तिकारी विस्फोट होने ही वाला था कि मि० ह्यूम को ठीक मौके पर सूझी और उन्होंने इस काम में हाथ डाला। इतना ही नहीं बल्कि राजनैतिक अशान्ति अन्दर ही अन्दर बढ़ रही थी। इसका प्रबल प्रमाण मिस्टर ह्यूम के पास था। उनके हाथ ऐसी रिपोर्ट की सात जिल्दें लगीं, जिनमें भिन्न-भिन्न प्रान्तों के अन्दर विद्रोह फैलाने वाले भाव का वर्णन था। विभिन्न धर्माचार्यों के कुछ शिष्यों का महलों से जो पत्र-व्यवहार हुआ उसके आधार पर वे रिपोर्टें तैयार की गई थीं। ऐसी अवस्था इस दीन देश की लार्ड लिटिन के समय में थी। देश में चारों ओर घोर निराशा ने अपना साम्राज्य क़ायम कर रक्खा था, निराशा की अवस्था में लोग कुछ कर गुजरना ही अधिक श्रेयष्कर समझते थे। इससे केवल इतना ही अभिप्राय है कि संभव है कि लोग हथियार लेकर

टूट पड़ते और जिनसे वे नफ़रत करते थे उनकी ख़ून ख़राबी करने को तैयार हो जाते।" ऐसे वातावरण में सन् १८८४ ई० की तीसरी दिसम्बर को हमारे चरित्रनायक राजेन्द्रप्रसाद ने जीरादेई जिला छपरा में जन्म लिया जिनका संक्षिप्त जीवन हम पाठकों के सम्मुख रख रहे हैं।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद का ज़न्म उस प्रान्त में हुआ है जहाँ पर बैठ कर भगवान् बुद्ध ने मनुष्यों को मोक्ष का ज्ञान दिया था। और बाद में वही प्रान्त अधिक विहार होने के कारण विहार कहलाया।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद के पूर्वजों के विषय में ऐसी कहावत चली आ रही है, कि आपके पूर्वपुरुष फ़तहपुर सीकरी जिला आगरा के रहने वाले थे, और यहाँ से वे लगभग दो सौ वर्ष पूर्व अमोड़ा नामक स्थान को चले गये। पीछे वहाँ से जीरा-देई जिला छपरा में रहने लगे। उर्दू, फ़ारसी और अरबी भाषा की विद्वत्ता तो उनके वंश में सदैव से ही चली आ रही है। इसी विद्वत्ता और अनुभव के कारण उनके पूर्वजों ने भिन्न-भिन्न राज्यों में दीवान के पद को सुशोभित किया था। जिला सारन में हथुवा राज्य के दीवान श्री चौधरलालजी हमारे बाबू राजेन्द्र-प्रसाद के पितामह बाबू मिश्रीलाल के खास बड़े भाई थे। बाबू चौधरलालजी अनुभवशीलता, विद्वत्ता, दूरदर्शिता, लोकप्रियता और प्रबन्धपटुता में काफ़ी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे।

राजेन्द्रप्रसाद के पिता, श्री महादेवसहाय जब केवल डेढ़ ही वर्ष के थे, तभी दैव दुर्वियोग से उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। पिता के देहान्त के कारण श्री महादेवसहायजी के लालन-पालन का भार दीवान चौधर-लालजी को ही उठाना पड़ा। बचपन में पिता की मृत्यु हो जाने के कारण आपको दीन-दुखियाओं से भरी हुई दुनिया का काफ़ी अनुभव हो गया था। बा० महादेवसहायजी मनुष्यता की सजीव मूर्ति थे। दीन, हीन जनों की करुणामयी वाणी सुनकर उनका कोमल हृदय पिघल जाता था। वे ग़रीबों की सब प्रकार से सहायता करते। यदि कभी कोई ग़रीबों को सताता तो आप सदा ग़रीबों का ही पक्ष लेते। उनसे ग़रीबों का दुःख नहीं देखा जाता था। वे ग़रीबों का साधारण कष्ट ही दूर नहीं करते थे, बल्कि अपने पास से रुपया ख़र्च करके ग़रीबों में दवा बँटवाते। वे सदैव ग़रीबों की प्राणपण से सेवा करने को सन्नद्ध रहते। इसी वजह से आस-पास के ग़रीब बाबू महादेवसहाय का हृदय से गुणानुवाद गायन करते और उनको सदैव दीनबन्धु के नाम से पुकारा करते थे। ये सभी पैतृक गुण बाबू राजेन्द्रप्रसाद में भी पाये जाते हैं।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद अपने पिता की अन्तिम सन्तान हैं। आपकी माता भी आपके पिता के समान ही दयालु थीं। वे सदैव ग़रीबों की सेवा करने में अपने पतिदेव का हाथ बटाती थीं, और सदैव सती साध्वी स्त्रियों के

समान अपने पति की प्राणपण से सेवा करने में ही धर्म समझती थीं। उनकी दृष्टि में उनके पतिदेव ही उनके इष्ट देव थे। वे पति-सेवा से अच्छा और किसी धर्म को नहीं समझती थीं। इनकी सभी सन्तानों में माता-पिता के सभी गुण कूट-कूट कर भरे हैं। राजेन्द्रप्रसाद के एक भाई महेन्द्रप्रसाद और तीन बहनें थीं। आपकी बड़ी बहन देश-सेवा बड़ी लगन के साथ कर रही हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा

राजेन्द्रप्रसाद ने गाँव की पाठशाला में विद्यारम्भ किया। बालकपन से ही आप बुद्धि के बड़े तेज़ थे। इनकी प्रखर बुद्धि को देखकर आरम्भ में ही जीरादोई के अध्यापक महोदय चकित हो गये और उन्होंने भविष्यवाणी की कि राजेन्द्र एक दिन बड़े जबरदस्त विद्वान् बनेंगे। वंश-परम्परा के कारण राजेन्द्रप्रसाद को फ़ारसी की शिक्षा दी गई; क्योंकि वे इनके पिता राजेन्द्रप्रसाद को उच्च अधिकारी के रूप में देखना चाहते थे। उन दिनों बालकों को मौलवी और पंडित ही संस्कृत और फ़ारसी की शिक्षा प्रदान किया करते थे। अपनी प्रतिभा के प्रभाव से सात-आठ वर्ष की उम्र में ही राजेन्द्र बाबू ने फ़ारसी की कई किताबें पढ़ डालीं और वे ऐसी फ़ारसी लिखने लगे जिसकी इतनी कम उम्र के बालकों से आशा नहीं की जा सकती।

नौ वर्ष की अवस्था में आपने मौलवी साहब के यहाँ का

फ़ारसी का पूरा कोर्स समाप्त कर डाला। तब आपके पिता बा० महादेवसहाय ने अपने लाड़ले पुत्र का नाम छपरा ज़िला-स्कूल में लिखवा दिया। अभी तक मौलवी साहब के पास राजेन्द्रप्रसाद ने केवल फ़ारसी भाषा का ही अध्ययन किया था। ज़िला स्कूल में उन्होंने अँग्रेज़ी, हिन्दी, गणित और संस्कृत का पढ़ना आरम्भ किया और थोड़े ही समय में आप अपनी कक्षा के तेज़ बालकों में समझे जाने लगे। इनकी प्रतिभा देखकर विद्यालय के शिक्षक इनसे बहुत प्रसन्न रहते और अपने दिल में कहा करते थे कि ऐसे विद्यार्थियों से ही अध्यापकों और विद्यालय का नाम उज्ज्वल हो जाया करता है। एक-एक वर्ष में बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने दो-दो वर्ष की पढ़ाई समाप्त कर सदैव साधारण बालकों की अपेक्षा दुगुना काम करके परीक्षायें उत्तीर्ण की। उन परीक्षाओं में भी आपका स्थान सदैव द्वितीय अथवा तृतीय से कभी नीचे नहीं गिरा। छपरा के बाद, कुछ दिन आपने टी० के० घोष साहब के एकेडेमी विद्यालय बांकीपुर (पटना) में अध्ययन किया। मगर जैसे बाबू राजेन्द्रप्रसाद की कक्षाओं की पढ़ाई बढ़ती जाती थी वैसे ही उनका स्थान भी बढ़ता जाता था। आपने जब सन् १९०२ ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय की परीक्षा दी तो आप बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आसाम और ब्रह्मा के सभी छात्रों में प्रथम ही नहीं आये बल्कि इतने नम्बर आपने हासिल किये कि सन् १९१२ तक कोई विद्यार्थी इतने नम्बर हासिल नहीं कर सका। उन दिनों आसाम

रंगून, बिहार, उड़ीसा और बंगाल कलकत्ता विश्वविद्यालय से ही सम्बंधित थे। इतने सूबों में सर्वोच्च स्थान पाना बाबू राजेन्द्र-प्रसाद जैसे प्रतिभाशाली व्यक्ति का ही काम था।

सर्वप्रथम परीक्षा पास करने के कारण बाबू राजेन्द्रप्रसाद को बीस रुपया मासिक की छात्रवृत्ति विश्वविद्यालय की ओर से प्रदान की गई और दस रुपये प्रेसीडेंसी कालेज की ओर से। इस प्रकार जब आप कालेज की प्रथम वर्ष में ही थे तभी से आपको ३०) मासिक की छात्रवृत्ति मिलने लगी।

राजेन्द्र बाबू दिन रात पढ़ने-लिखने में ही नहीं लगे रहते थे। इनका स्थान खेल में भी अद्वितीय था। फुटबॉल के आप सदैव से अच्छे खिलाड़ी रहे हैं। मगर आरम्भ से ही राजेन्द्र बाबू का नियम था कि वे पढ़ने के समय में सदैव पढ़ते और खेलने के समय खेलते। खेलने से जो समय बचता उसको आप हिन्दी के निबन्ध लिखने अथवा वाद-विवाद में व्यय किया करते थे। आपकी ऐसी प्रतिभा, गम्भीरता और लगन देखकर, दूसरे विद्यार्थियों को भी वाद-विवाद में भाग लेने को बड़ा उत्साह मिलता था। स्कूल में इस वाद-विवाद-सभा के कारण नवीन जीवन का संचार होने लगता था। विद्यार्थियों पर बाबू राजेन्द्रप्रसाद की गम्भीरता का बड़ा प्रभाव पड़ता और वे अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पूरी दिलचस्पी से वाद-विवाद में भाग लेने को सन्नद्ध रहते।

कालेज-जीवन

ऐण्ट्रेंस पास करने के पश्चात् बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने कलकत्ता के सुप्रसिद्ध प्रेसीडैंसी कालेज में अपना नाम लिखाया। मगर आरम्भ में कलकत्ता का जल-वायु अनुकूल न रहने के कारण आपका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। आपकी तबीअत दिन पर दिन ख़राब होती जाती थी। वर्ष के आरम्भ से लेकर दशहरे की छुट्टियों तक आपको बीमारी ने बड़े ज़ोर का झकझोरा लगाया। इतने दिन बीमार रहने के कारण आपका स्वास्थ्य बहुत ही खराब हो गया, मगर दशहरे के बाद आपका स्वास्थ्य कुछ-कुछ सँभलने लगा। अभी तक आपने पढ़ने का तो नाम भी नहीं लिया था। आपने एफ० ए० कक्षा में अंग्रेज़ी, विज्ञान, गणित तथा तर्क-शास्त्र आदि विषय लिये थे। कालेज के प्रारम्भिक जीवन में ही आजकल विद्यार्थी इतनी शान-शौकत और तड़क-भड़क से रहते हैं कि साधारण मनुष्यों को ही नहीं बल्कि पढ़े-लिखे लोगों को भी ठाठ-बाट के कारण वे अफ़सर प्रतीत होते हैं। शान-शौकत में कालेज के विद्यार्थी शहर में एक प्रकार का नया ही वायुमण्डल पैदा कर देते हैं। सिनेमा और सिगरेटों में माँ-बाप के पसीने की कमाई को पानी की तरह बहाना ही अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य समझ बैठते हैं। बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने जब प्रेसीडेंसी कालेज में पदार्पण

किया, उस समय आपको विज्ञान की शिक्षा डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय एम०एस-सी० और डाक्टर सर जगदीशचन्द्र वसु से मिली थी। डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय की सादगी का प्रभाव बाबू राजेन्द्र प्रसाद पर इतना पड़ा कि आप कभी फ़ैशन के शिकार नहीं हुए। आपने डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र की भाँति सदैव के लिये सादगी को ही स्वीकार किया। आप उपर्युक्त दोनों अध्यापकों के बड़े प्रिय पात्र थे। डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय को तो बाबू राजेन्द्रप्रसाद पर बड़ा ही फ़ख्र था और वे कक्षा में विद्यार्थियों के सम्मुख कहा करते थे कि राजेन्द्र जैसे विद्यार्थियों से ही संस्था सदैव चमकने की आशा रखती है। प्रतिदिन कालेज में हाज़िर रहने वाला विद्यार्थी ही विज्ञान में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है। मगर हमारे चरित्र नायक बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने बीमारी के कारण प्रयोगशाला जाना तो दूर रहा कालेज की शक्ल भी छै मास तक नहीं देखी। तब भला किस प्रकार विज्ञान में बाबू राजेन्द्रप्रसाद अधिक से अधिक नम्बर प्राप्त करते। ऐण्ट्रेन्स की परीक्षा के लिये राजेन्द्र बाबू ने काफ़ी परिश्रम नहीं किया था, मगर दैवयोग से चार सूबों के विद्यार्थियों में सर्व प्रथम स्थान मिल गया। बीमारी से अच्छे होकर जब आप कालेज आने लगे तब इनको प्रोफ़ेसर रसिकलाल जी ने उत्साहित करके कहा—"देखो, राजेन्द्र, कहीं एफ० ए० में लुटिया न डुबो देना। प्रथम आने का बंगाली विद्यार्थी बहुत प्रयास करेंगे।" प्रो० रसिकलाल के उत्साहित करने के कारण बाबू

राजेन्द्रप्रसाद ने जी तोड़ कर इतना परिश्रम किया कि सफलता देवी ने इनकी प्रयत्नशीलता पर मुग्ध होकर इनके लिए सर्व प्रथम आसन ख़ाली कर दिया, जिस पर बाबू राजेन्द्रप्रसाद विराजमान हुए। परीक्षा में प्रथम होने के कारण कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर से बाबू राजेन्द्रप्रसाद को तीस रुपया मासिक की छात्रवृत्ति मिली और बीस रुपया मासिक प्रेसीडैंसी कालेज ने देकर आपको सम्मानित किया। इस प्रकार बाबू राजेन्द्रप्रसाद को, जिस समय वह B. A. की तीसरी वर्ष में आये ५०) मासिक की छात्रवृत्ति मिलती थी। इसके सिवा प्रथम आने के कारण बहुतसी सभा-सुसायटियों ने स्वर्ण और रजत पदक देकर आपको सम्मानित किया। पारितोषिक की किताबें तो अच्छी से अच्छी आपको इतनी मिलीं जिनसे एक छोटा-मोटा पुस्तकालय खोला जा सकता था।

बी० ए० में भी आपको सर्वप्रथम उत्तीर्ण होने के कारण विश्वविद्यालय की ओर से ५०) रु० मासिक की छात्रवृत्ति मिली। प्रेसीडैंसी कालेज ने भी आपको ४०) रु० मासिक छात्रवृत्ति देकर आपका सम्मान किया। हमारे देश में कलकत्ता विश्वविद्यालय अँग्रेज़ी शिक्षा-प्रचार की सबसे प्राचीन और प्रतिष्ठित संस्था है। मगर जब से विश्वविद्यालय चल रहा है, तब से बिहार प्रान्त में ही नहीं, बल्कि, आसाम, बंगाल और ब्रह्मा में भी अब तक कोई ऐसा विद्यार्थी नहीं आया जिसने

ऐण्ट्रेंस से लेकर बी० ए० तक की सभी परीक्षाओं में सर्वप्रथम स्थान पाया हो। यह गौरव तो हमारे चरित्र नायक बाबू राजेन्द्र-प्रसाद को ही प्राप्त हुआ। इससे अधिक प्रतिभा का जीता जागता क्या उदाहरण हो सकता है ?

बाबू राजेन्द्रप्रसाद केवल किताबों के ही कीड़े नहीं थे। पढ़ने के साथ-साथ जहाँ कहीं आपको पढ़ने से अवसर मिला वहाँ आपने विद्यार्थीसंघ या वाद-विवाद सभा अवश्य स्थापित कीं। इन बातों का प्रारम्भ तो आपने स्कूल के जीवन में ही कर दिया था। पढ़ने के सिवा जितना समय आपको मिलता आप उस समय में सदा यही सोचा करते थे कि देश के विद्यार्थियों के संघटन का सहल साधन क्या हो सकता है ? इसके अलावा उस समय के जितने सार्वजनिक आन्दोलन थे, सभी में सक्रिय सहयोग देकर आन्दोलन को सफल बनाने का सदैव से प्रयत्न करना ही आपके जीवन का नियम रहा है। जिन दिनों आप प्रेसीडैंसी कालेज में शिक्षा पा रहे थे, आपने कालेज में भी कालेज यूनियन और विद्यार्थी वाद-विवाद सभाओं की स्थापना की, और उक्त सभाओं का सेक्रेटरी बन कर उनको नियमित रूप से चलाने का कार्य भी किया।

बी० ए० पास करने के पश्चात् आपने अपने पुराने प्रेसीडैंसी कालेज में अँग्रेजी के एम० ए० में नाम दाखिल कर लिया। उस समय आपके दिल में इंगलैंड जाने का विचार उठा और आप सोचने लगे कि अब तो इँगलैंड से ही बै-

स्टरी पास करके भारत वापस आवेंगे। बस विचार के आते ही इँगलैण्ड जाने की तैयारियाँ आरम्भ कर दीं। आप जैसे प्रतिभाशाली विद्वान् के लिये विलायत जाना कौनसा कड़ा काम था। जब विलायत जाने की सब तैयारी कर चुके, तब आपने अपने बड़े भाई महेन्द्रप्रसादजी को पत्र-द्वारा सूचित किया। उसी समय घर वालों को पता चला कि हमारा राजेन्द्र विलायत जा रहा है। मगर "मेरे मन कछु और है कर्ता के कछु और" के अनुसार आपके पिताजी को जो रुग्णावस्था में रोगशैया पर पड़े हुये थे, बहुत बुरा लगा और उन्होंने यह कह कर राजेन्द्रको विलायत जाने से रोक लिया कि 'जब मैं अच्छा हो जाऊँ तब तुम विलायत जाना।' मगर बाबू राजेन्द्रप्रसाद की माता तो किसी दशा में भी अपने प्यारे पुत्र का वियोग आँखों से देखना नहीं चाहती थीं। दुर्भाग्य से बाबू राजेन्द्र-प्रसाद के पिता की बीमारी दिनों दिन बढ़ती ही चली गई और मार्च सन् १६०७ ई० में बाबू महादेवसहाय का स्वर्गवास हो गया। बाबू महादेवसहाय के मरने पर सम्पूर्ण ग्राम जीरा-दोई में शोक छा गया। जिस किसी ने यह शोक-संवाद सुना एक दम वह उनके घर की ओर चल भागा। सभी ग्रामवासी इनके शोक में विकल हो उठे। लोग रो-रो कर कहते जाते थे कि बाबू साहब ने जीवन-भर हम लोगों के दुःख दूर करने को प्राणपण से कोशिश की, वे दीन-हीन की सदैव सहायता ही नहीं करते थे, बल्कि हारी बीमारी में अपने दामों से दवा

ख़रीद कर ग़रीबों में बटवाते, हकीम और डाक्टरों से उन ग़रीबों का इलाज कराते जिनके पास ज़हर खाने तक को पैसा न था। ऐसे सहृदय सज्जन का हमारे बीच से उठ जाना हमारा ही दुर्भाग्य समझना चाहिये।" बाबू महादेवसहाय की मृत्यु के कारण राजेन्द्र बाबू की माता को असह्य दुःख हुआ। वह सदैव उनकी याद में शोकाकुल रहतीं। उनका दिन-रात रोते-रोते ही व्यतीत होता। जो कोई इनकी माता का रोना सुनता उसका दिल दहल कर पिघल उठता और वह बिना रोये रह नहीं सकता था। इस प्रकार शोकाकुल माता को छोड़कर भला बाबू राजेन्द्रप्रसाद किस प्रकार विलायत को चले जाते। माता के स्नेह के सम्मुख राजेन्द्र बाबू को अपनी इँगलैण्ड की यात्रा कुछ समय को स्थगित कर देनी पड़ी।

पिताजी की मृत्यु के बाद बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने अपनी पढ़ाई तो अवश्य जारी रक्खी मगर पितृ-शोक के कारण अब उनका पढ़ने-लिखने में मन वैसा नहीं लगता, जैसा कि पिताजी के जीवन में लगा करता था। इसके सिवा अब बाबू राजेन्द्रप्रसाद की प्रवृत्ति सार्वजनिक कार्यों की ओर झुक रही थी। वे अब सभी सार्वजनिक संस्थाओं की प्राण-पण से सेवा करने को सदैव सन्नद्ध रहते। पिताजी की मृत्यु के कारण भी आप सन् १९०७ के स्वदेशी आन्दोलन से अलग नहीं रह सके। उनसे जितना भी हो सकता था, अपनी शक्ति के अनुसार स्वदेशी आन्दोलन को सहायता ही नहीं दी, बल्कि स्वदेशी आन्दोलन

करनेवाले नवयुवकों को संगठित करके विहार में स्वदेशी आन्दोलन का इतना कार्य किया जितना बंगाल को छोड़कर भारत के किसी सूबे में नहीं हो पाया। इतना अधिक देश का कार्य करने के कारण सदा की भाँति एम० ए० में बाबू राजेन्द्र प्रसाद सर्वप्रथम नहीं आसके। फिर भी आपका स्थान कलकत्ता के विश्वविद्यालय भर में पाँचवाँ था। एम० ए० के साथ-साथ बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने कानून भी ले रक्खा था। मगर स्वदेशी आन्दोलन का कार्य अधिक होने के कारण आपको Law की परीक्षा में बैठने का अवसर नहीं मिल सका और आपनें B. A., B. T. की परीक्षा सन् १६१६ में दी। और सदैव की भाँति सफल विद्यार्थियों में सर्वोच्च स्थान पाया।

भारत के भावी नेता होने की भविष्य वाणी

विद्यार्थी-जीवन से ही बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने अपने जीवन का आदर्श बना लिया था, और तब से अब तक आप उसी आदर्श के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करते चले जा रहे हैं। बाबू राजेन्द्रप्रसाद के कालेज-जीवन में, स्वामी विवेकानन्द जी ने अपनी तपस्या, तेज, अध्ययनशीलता और योग के द्वारा केवल बंगाल में ही नहीं बल्कि जापान, अमेरिका, इँगलैण्ड और अन्य देशों में भारत की धर्मप्रियता का झण्डा ऊँचा करके अनेक विदेशियों को शान्ति का पाठ पढ़ाया था। सिस्टर निवेदिता स्वामी विवेकानन्द की अमेरिकन शिष्या थीं। स्वदेशी आन्दोलन

के दिनों में आपको पटना आने का भी अवसर मिला था। कई धार्मिक सभाओं में आपने भाषण दिया, उस समय बाबू राजेन्द्र प्रसाद की वेशभूषा देखकर सिस्टर निवेदिता ने भविष्य वाणी की थी कि एक दिन राजेन्द्र भारत का बहुत बड़ा राष्ट्रीय नेता बनकर भारत की राष्ट्रीयता का झण्डा फहरावेगा। कालेज की पढ़ाई समाप्त करके जितने कार्य भी राजेन्द्र बाबू ने किये सच्ची लगन और अपने आदर्श को सम्मुख रखकर ही किए। सार्वजनिक आन्दोलनों में कार्य करके, आपने काफ़ी सफलता प्राप्त की है। आजकल भी आपका जीवन राष्ट्रीयता की हिलोरों के साथ दिन पर दिन उन्नति के पथ पर अग्रसर होता हुआ चला जा रहा है। आज के भारत को नीवन जीवन देने का श्रेय कर्मवीर, त्यागी, परम तपस्वी गान्धी मोहनदासजी को ही है, मगर महात्मा गान्धीजी के. सच्चे सेवक, सीधे हाथ बल्लभ भाई पटेल, खान अबदुलगफ्फार ख़ाँ और राजेन्द्र बाबू को ही समझना चाहिये। जिसमें खानसाहब को तो सभी फ्रन्टियर गान्धी कहते ही हैं; मगर बिहारी नेता बाबू राजेन्द्रप्रसाद को भी लोग बिहारी गान्धी के नाम से सम्बोधित करते हैं। आपका नाम बिहार में बड़े गौरव से लिया जाता है। बिहार के सभी सार्वजनिक कार्यों में आपका पूरा हाथ रहता है।

बिहारी सार्वजनिक संस्था

राजेन्द्र बाबू को बचपन ही से सार्वजनिक कार्य्यों के करने

में सदा आनन्द आता था। सन् १६०२ में आप ऐण्ट्रेंस पास करके जब कलकत्ता आये थे, उस समय बिहारी विद्यार्थियों के ठहरने का इतना भी प्रबन्ध वहाँ पर न था कि विद्यार्थी दो-चार दिन ठहर कर अपना कालेज में नाम तो दाखिल करवा दें। बिहार दूर होने के कारण विद्यार्थियों को कालेज में दाखिल होने में बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ता था। बिहारी विद्यार्थियों की मुसीबत देखकर 'बिहारी क्लब' की स्थापना की गई थी। इस क्लब का मुख्य काम बिहारी विद्यार्थियों को सब प्रकार की सहूलियतें जुटाना था। इस क्लब के कारण अब कालेज़ में प्रवेश होने का संकट भी ज़ाता रहा। बिहारी विद्यार्थी कालेज में अपना दाख़िला अब आसानी से कराने लगे। सब से प्रथम बाबू राजेन्द्रप्रसाद ही इस क्लब के मंत्री थे। बिहारी विद्यार्थी तो इस क्लब की सहायता करते ही थे मगर बाबू राजेन्द्रप्रसाद के पुरुषार्थ के कारण दूसरे बिहारी लोगों से, जो कलकत्ते में रहते थे, काफ़ी सहायता मिल जाती थी। धीरे-धीरे इस संस्था की ख्याति दूर-दूर पहुँच गई, और इसी संस्था के कारण बाबू राजेन्द्रप्रसाद की प्रतिष्ठा होनी आरंभ हुई। पढ़े-लिखे विद्यार्थियों के दिल में बाबू राजेन्द्रप्रसाद के प्रति अब काफ़ी श्रद्धा के भाव उत्पन्न हो गये थे।

सबसे पहला छात्र-सम्मेलन बिहारी क्लब में ही किया गया। यही पहली संस्था थी जिसने बिहारी विद्यार्थियों के दिल में संगठन का भाव उत्पन्न किया था। जब बाबू राजेन्द्रप्रसाद

एम० ए० कर चुके तो आप विहारी क्लब की स्थापना का पूरा कार्य पटना में आरम्भ करना चाहते थे, और आपके प्रयत्न से ही बिहारी क्लब का सबसे प्रथम उत्सव १६०६ ई० में पटना में हुआ। आपके ही प्रयत्न का फल था कि कलकत्ते में डौन सुसायटी का जन्म हुआ। इस सुसायटी ने विद्यार्थियों की मानसिक उन्नति में काफ़ी सहायता प्रदान की। सुसायटी की ओर से बड़े-बड़े विद्वान् विद्यार्थियों में लेक्चर देने के लिये मन्त्रित किये जाते थे। और जो विद्यार्थी उन भाषणों का सुन्दर और संक्षिप्त वर्णन लिखता उसी को पारितोषिक प्रदान किया जाता था। किस विद्यार्थी का निबन्ध अच्छा है इसका निर्णय एक कमेटी करती थी। इस कमेटी ने बाबू राजेन्द्रप्रसाद को कई बार सबसे उत्तम लेखक पाया और उनको पारितोषिक देना निश्चय किया। प्रथम पुरस्कार पाना तो आपके बाँये हाथ का काम था।

देश-सेवा

देश-सेवा और सादगी के भाव बाबू राजेन्द्रप्रसाद में विद्यार्थी जीवन से ही कूट-कूट कर भरे थे। इन्हीं भावों के कारण जहाँ तक भी आपसे हो सकता था आप स्वदेशी वस्तु का ही उपयोग करते थे। देशी वस्तु न मिलने पर ही विदेशी वस्तु भले ही काम में लाते। आपकी चलाई हुई डौन सुसायटी में एक ऐसा विभाग था, जो स्वदेशी चीज़ों का न केवल प्रचार करता

था, बल्कि स्वदेशी वस्तु बिकवाने में भी देशी कारीगरों को उत्साहित करता एवं विद्यार्थियों को स्वदेशी चीज़ें ख़रीदने के लिये आकर्षित करता। विद्यार्थियों में जीवनी शक्ति के संचार के हित राजेन्द्र बाबू ने डौन सुसायटी से ऐसे कई पारितोषिक रखवा दिये थे जिनमें कुछ तो उन विद्यार्थियों के लिये नियत किये गये थे, जिनका नम्बर स्वदेशी चीज़ों के ख़रीदने में सर्व प्रथम हो। कुछ पारितोषिक उन स्वदेशी चीज़ बनाने वाले कारीगरों को भी दिये जाते जो देशी चीज़ को सर्वोत्तम बना सकते। बाबू राजेन्द्र-प्रसाद ने इस सुसायटी से स्वदेशी वस्तु ख़रीदने में सर्व प्रथम होने के कारण कई पारितोषिक प्राप्त किये। देश के सार्व-जनिक जीवन के मुक़ाबिले में राजेन्द्र बाबू अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की तनिक भी परवाह नहीं करते थे, और न वे अपने सुख-दुःख को किसी सभा-सुसायटी के सम्मुख आने देते। सन् १६०७ के स्वदेशी आन्दोलन में राजेन्द्रप्रसाद ने बिहार में इतना कार्य किया कि देश के अन्य सूबों में इतना शायद ही कहीं हुआ हो। देश के कार्यों में इनकी ऐसी तत्परता देखकर ही प्रत्येक के मुख से यकायक यही शब्द निकल पड़ते थे कि बिना महान् नेता बने हुये राजेन्द्र कभी रह नहीं सकते। देश का कार्य करने के कारण बाबू राजेन्द्रप्रसाद वकालत की परीक्षा तक में सम्मिलित नहीं हो सके, और कहीं १६१० ई० में आपको क़ानून की परीक्षा देने का अवसर मिला। यदि राजेन्द्र बाबू के समान दस विद्यार्थी भी देश के काम में कमर कस कर तैयार हो जायँ

तो भारत माता की गुलामी का तौक़ बात की बात में तोड़ा जा सकता है।

गृहस्थ जीवन और कुटुम्ब

गृहस्थ जीवन भी संसार में एक बड़ी विचित्र चीज़ है। इस में प्रवेश करते ही सैकड़ों मनुष्यों का जीवन ही पलट जाता है। मनुष्य का स्वतन्त्र जीवन एक प्रकार से परतंत्र बन जाया करता है। सैकड़ों मनुष्य जो गृहस्थ जीवन से पूर्व देश, जाति और राष्ट्र का कार्य करने को सन्नद्ध रहा करते थे, गृहस्थ बनते ही सिवाय नोन तेल लकड़ी के सब को भूल जाते हैं। इस परिवर्तनशील संसार में सैकड़ों ही मनुष्य रोज़ गृहस्थ बनकर कौए-कुत्ते की भाँति ज्यों-त्यों अपना पेट पालते हुये अपना जीवन समाप्त कर जाते हैं। कोई यह भी नहीं जानता कि वे कब पैदा हुये और कब मरे। गृहस्थी की ऐसी अवस्था देखकर गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो यहाँ तक कह डाला है कि "तुलसी गाय बजाय के देत काठ में पाँय" मगर स्वनाम धन्य श्रद्धेय बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी मनुष्य जाति के शिरमौर हैं, उनका कोमल हृदय दीन-दुखियों की दीन दशा देखकर आरम्भ से ही फूटफूट कर रोने लगता था। वे पीड़ितों की पुकार सुनकर पुरुषार्थ का आश्रय लेने वाले श्रेष्ठ मनुष्यों में से हैं। उन्हें आपत्तियों का पर्वत देखकर "किंकर्त्तव्यविमूढ़" बनना नहीं आता। उनका हृदय लोगों के कष्ट को अनुभव करता, और मस्तिष्क उसकी निवृत्ति का सफल

साधन सोचता रहता है। किसी को संकट-ग्रस्त देखकर अबलाओं की तरह आँसू बहाने से कभी काम नहीं चलता। वीर पुरुष वही है जो आड़े वक्त में अपने पौरुष-प्रभाकर की प्रखर किरणों द्वारा जगत् को जीवन प्रदान कर देता है। गृहस्थ होने पर भी राजेन्द्रबाबू का जीवन सदैव से उच्च कोटि के साधु के समान रहा है। उनकी नज़र में सार्वजनिक सेवा ही प्रधान वस्तु है, और गृहस्थ जीवन इसके बाद। उनकी देश-भक्ति में स्त्री, पुत्र कभी कोई बाधा नहीं डाल सके हैं। राजेद्रबाबू को विद्यार्थी जीवन से अबतक परोपकार, त्याग और तपस्या के जीवन में ही स्वर्गीय सुख का अनुभव होता रहा है।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद का विवाह तो बाबू हरनन्दनलाल मुख्त्यार दलन छपरा जिला बलिया की पुत्री के साथ तभी हो गया था जब आप पाँचवीं कक्षा में पढ़ते थे। तब से आप सदैव ही देश के कार्यों में लगे रहते हैं और गृहस्थी आपके किसी कार्य में बाधक सिद्ध नहीं हो सकी। आपके इस समय दो पुत्र मृत्युञ्जयप्रसाद और धनंजयप्रसाद हैं। राजेन्द्र बाबू को अपने घर-बार की कभी भी कोई चिन्ता नहीं करनी पड़ी है। अपने बड़े भाई महेन्द्रप्रसादजी के जीवन में सदैव स्वतंत्र होकर देश का कार्य संलग्नता से करते रहे हैं। बाबू महेन्द्रप्रसाद-जी के कारण ही बाबू राजेन्द्रप्रसाद को अपनी गृहस्थी का इतना पता तक नहीं रहता था कि सूर्य किधर निकलता और किधर डूबता है। बाबू राजेन्द्रप्रसाद की गृहस्थी का भार

और बालकों के पालन-पोषण तथा शिक्षा का प्रबन्ध इनके बड़े भाई महेन्द्रप्रसादजी के हाथ में ही रहा। मगर बाबू महेन्द्रप्रसादजी की हाल में मृत्यु हो जाने के कारण ही गृहस्थी का भार बाबू राजेन्द्रप्रसाद पर अब थोड़े दिनों से पड़ा है। इस समय आपके परिवार में दो पुत्र और पुत्र वधुयें, स्त्री, भगवती देवी आपकी बड़ी बहन और बड़े भाई के बालबच्चे हैं।

राजेन्द्र बाबू की भाँति इनका सारा कुटुम्ब ही स्वदेशी का भक्त है। छोटे-बड़े सभी खद्दर के पक्के प्रेमी हैं। इनके कुटुम्ब में से पर्दे की प्रथा को सदव के लिये विदा हो जाना पड़ा है। अपने समान ही राजेन्द्र बाबू ने अपने सभी कुटुम्ब को सादगी के साँचे में ढालने का प्रयत्न किया है। आपने अपनी स्त्री और पुत्र-बधुओं को महात्मा गान्धी के साबरमती आश्रम में शिक्षा प्राप्त करने को भेजा था। इनकी बड़ी बहन श्री भगवती देवी प्रत्येक राष्ट्रीय कार्य में सदैव से बड़ा कार्य करती रही हैं। सन् १९३०-३३ तक आपको कई बार जेल जाने का भी सौभाग्य प्राप्त हो चुका है।

आपके वंश के लोग सदैव से ही उदार विचार के रहे हैं। आज-कल तो कोई इतना अधिक विचार नहीं करता। मगर एक समय था जब लोग ज़रा-ज़रा सी बातों के कारण दूसरों के जीवन को संकट में डाल देते थे। उन दिनों जो मनुष्य पढ़ने-लिखने के लिये विलायत जाता था, वह हिन्दू धर्म के अनुसार पतित समझा जाता था। लोग उसका छूआ हुआ पानी तक

नहीं पी सकते थे। उन्हीं दिनों की बात है कि सन् १६०४ ई० में सुप्रसिद्ध गणितज्ञ श्री डाक्टर गणेशप्रसादजी जब विलायत से लौट कर आये तब बिहार प्रान्त में एक प्रकार से तहलका मच गया। कोई मनुष्य उनको अपने घर इसलिये भोज इत्यादि नहीं देता था कि कहीं जाति से न निकाल दिया जाऊँ। मगर उन दिनों में यह श्रेय बाबू राजेन्द्रप्रसाद के वंश को ही था कि उन्होंने डाक्टर गणेशप्रसादजी को गले लगाया, उनके यहाँ खुले दिल से भोजन किया और उन्हें अपने यहाँ ठहराया, यद्यपि उनके सारे गाँव ने इस बात का विरोध किया था इस पर भी राजेन्द्रप्रसाद के कुटुम्बियों ने किसी प्रकार की परवाह नहीं की।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद को धनलोलुपता तो नाममात्र को भी छू नहीं गई। यदि आप धनलोलुप होते तो आज किसी बड़े से बड़े पद पर सुशोभित होकर आपने अतुल धन राशि एकत्र करली होती। उन दिनों, जब कि भारत के ग्रेजुयेट्स को आजकल के विद्यार्थियों की भाँति जूतियाँ नहीं चटकानी पड़ती थीं, बग़ैर प्रयत्न के ही अच्छी से अच्छी सरकारी नौकरी मिल सकती थी। आप जैसे प्रतिभाशाली विद्यार्थी को आई० सी० एस० अथवा पी० सी० एस० में आना कौन कठिन कार्य था। और उस समय से ही आप यदि सरकारी नौकरी करना पसन्द करते तो आज किसी विशेष पद पर अवश्य आरूढ़ होते। मगर आपने तो विद्यार्थी जीवन से ही अपने जीवन का आदर्श देश-सेवा बना

लिया था। और तब से आज तक आप उसी आदर्श पर दृढ़ता से कार्य करते चले जा रहे हैं।

कालेज में अध्यापन

बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने जिस समय B. A. पास किया था, उस समय उनका विचार विलायत जाकर बैरिस्टरी पास करने का था, पर पिताजी की बीमारी के कारण आपने विलायत की यात्रा स्थगित करदी थी। जब आप विलायत नहीं जा सके तो आपका विचार देश में ही क़ानून पढ़ने का हुआ। आपने M. A. के साथ-साथ क़ानून भी ले लिया था, मगर हम पिछले अध्याय में लिख चुके हैं कि स्वदेशी आन्दोलन में कार्य करने के कारण आपको पढ़ना तो दूर रहा किताब छूने तक का भी अवसर नहीं मिला। इसलिये आप क़ानून की परीक्षा में १६०७ में न बैठ सके। हमारे देश के कार्य करने वालों को जिन आर्थिक संकटों में होकर गुज़रना पड़ता है, उसको केवल भुक्त भोगी ही जानते हैं। परोपकार का कार्य करते-करते देश-सेवकों की आत्मा इतनी उच्च हो जाती है कि वे अपने निज के कष्टों को कष्ट नहीं समझते, मगर सार्वजनिक कार्य-कर्ताओं को मानसिक वेदना उस समय होती है, जब उनके साथियों को चने भी मयस्सर नहीं होते। राजेन्द्र बाबू प्रातःकाल से रात तक देश के सार्वजनिक कार्यों में लगे रहते, मगर भोजन की समस्या किस प्रकार हल हो ? देश के अन्दर आजकल तो कुछ सहृदय

सज्जन उत्पन्न भी हो गये हैं जो कभी-कभी देश-सेवकों की थोड़ी-बहुत सहायता कर दिया करते हैं। मगर जिन दिनों राजेन्द्रबाबू ने कार्य आरम्भ किया था, उन दिनों तो सार्वजनिक कार्य करना मानो नंगे पैरों तलवार की धार पर चलना था। छोटे-छोटे सार्वजनिक कार्यकर्ता अपनी कष्ट-गाथा केवल अपने नेता से ही कह सकते हैं। इस बीच में राजेन्द्र बाबू को भी संभव है कुछ अनुभव हो गया हो। और इसीलिये उनकी धारणा क़ानून पढ़ने की हो गई हो, कि क़ानून पास करके खूब रुपया पैदा करेंगे और रुपये से राष्ट्र का कार्य भी सुचारु रूप से सम्पादित किया जा सकेगा। मगर पास इतना पैसा कहाँ कि फ़ौरन क़ानून पढ़ने चल दें। रुपये की कमी के कारण राजेन्द्रबाबू ने अध्यापकी करने का निश्चय किया। उन्हीं दिनों भूमिहार ब्राह्मण कालेज में अँग्रेजी के अध्यापक की आवश्यकता थी। राजेन्द्र बाबू की पढ़ाने में धाक तो विद्यार्थी जीवन से ही सारे बिहार में बैठ चुकी थी। कालेज के अधिकारियों की बड़ी प्रबल इच्छा थी कि किसी प्रकार राजेन्द्र बाबू उनके कालेज में आ जायँ तो कालेज की अवस्था सुधर जाय। इसलिये कालेज से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से व्यक्तियों ने राजेन्द्र बाबू को अँग्रेजी पढ़ाने के लिये कालेज में रख लिया।

कालेज में प्रोफ़ेसर होने पर भी राजेन्द्र बाबू सदैव की सादगी के अनुसार ही जाते। कभी उनको टाई कालर आदि बाँधते नहीं देखा गया। अध्यापक होते ही आपने विद्यार्थियों को इस पटुता से पढ़ाया कि थोड़े ही दिनों में आपकी योग्यता

की धाक कालेज भर में जम गई। जिस समय कालेज-क्लास में आपका विद्वत्तापूर्ण भाषण होता, उस समय विद्यार्थी ऐसे खामोशी से सुनते कि मानो उनके ऊपर किसी ने जादू का प्रभाव डाल दिया हो। आपने अपनी योग्यता, परिश्रम और सादगी के कारण वह प्रतिष्ठा पैदा की कि विद्यार्थी गण आपके लिये प्राणों तक की परवाह न करके सब कार्यों को तैयार रहते। थोड़े दिन बाद आप उसी भूमिहार कालेज में प्रिंसिपल भी रहे। आपने प्रिंसिपल-शिप का कार्य केवल थोड़े ही दिनों किया, मगर उतने ही समय में कालेज की अवस्था को इतना संभाल दिया जो दूसरों के बल बूते पर वर्षों में नहीं संभाली जा सकती थी। कालेज छोड़ कर आप कलकत्ता क़ानून की तैयारी करने को चले गये। उस समय कलकत्ते के सिटी कालेज के इतिहास और अर्थशास्त्र के प्रोफ़ेसर छुट्टी पर गये हुए थे। उनकी जगह पर कालेज के अधिकारियों ने बाबू राजेन्द्रप्रसाद को ही नियुक्त कर दिया। आपने यहाँ भी लड़कों को बड़ी योग्यता से पढ़ाया। विद्यार्थी आपकी कक्षा में इतनी शान्ति से बैठते मानो जादू का खेल देख रहे हों। राजेन्द्र बाबू ने सन् १६१६ में वकालत की परीक्षा पास की और वकालत का कार्य भी आपने कलकत्ते में ही शुरू कर दिया। उन्हीं दिनों आपको कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस-चान्सलर सर आशुतोष मुकर्जी ने कलकत्ता के लॉ कालेज में क़ानून का प्रोफ़ेसर नियुक्त किया, क्योंकि उन दिनों सर आशुतोष मुकर्जी कलकत्ता विश्वविद्यालय में योग्य से योग्य विद्वानों की नियुक्ति

की थी। इस पद पर रहते हुए आपने सन् १९१४-१६ तक बड़ी योग्यता से इस कार्य को सम्पादित करके अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

वकालत में सफलता

विद्यार्थी-जीवन में प्रत्येक विद्यार्थी अपने मन में यह सोचता है कि वकालत एक स्वतंत्र पेशा है। कम परिश्रम से ही वकालत में अधिक कमाया जा सकता है। यही सोच कर प्रत्येक ग्रेजुयेट व जिसको कोई काम नहीं मिलता, वकालत पढ़ना आरम्भ कर देता है। मगर मेरी नम्र सम्मति में तो सबसे अधिक कठिन कहे जाने वाले पेशे दो ही हैं। प्रथम वकील का, दूसरा डाक्टर का। यह बात मानी जा सकती है कि लोग नवीन डाक्टर से साधारण बीमारियों की चिकित्सा करा लें, मगर कड़े रोग में उनको सदैव अनुभवी डाक्टरों की शरण में जाये बिना कार्य नहीं चल सकता। यही बात वकीलों के विषय में भी कही जा सकती है। शुरू-शुरू में तो हर एक वकील को अपने घर से ही खाने का प्रबन्ध करना पड़ता है। नये वकील को तो घर वाले और कुटुम्ब के लोग भी बड़े मुकदमों में हाथ तक नहीं डालने देते। हाँ छोटे-मोटे अदालत के काम भले ही दे दें। और यदि उन कामों में कामयाबी हो गई तब कहीं नये वकीलों को अच्छे और बड़े कार्यों में हाथ डालने का अवसर मिलता है। हमारे यहाँ तो आज-कल ही वकीलों की संख्या बढ़ गई है।

मगर कलकत्ते में तो राजेन्द्र बाबू के विद्यार्थी-जीवन में ही वकीलों की संख्या अधिक थी। राजेन्द्र बाबू ने वकालत का पेशा सन् १९१० ई० से आरम्भ किया। आपने सबसे प्रथम वकालत कलकत्ता हाई कोर्ट में की, क्योंकि उन दिनों पटना में हाई कोर्ट न था। विद्यार्थी-जीवन में उच्च स्थान पाने के कारण तथा बिहारी क्लब और डौन सुसाइटी स्थापित करने के कारण आप पहले ही प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। इस लिये ज्योंही आपने वकालत का कार्य आरम्भ किया, आपके पास मुकद्दमे आने लगे। इस लिये आरम्भ में ही आपको सफलता के साक्षात् दर्शन होना आरम्भ हो गया था।

आपको अन्य वकीलों की भाँति घर से ख़र्च खाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। आपका यश दिन दूना रात चौगुना फैलने लगा। उन दिनों कलकत्ते के नामी वकीलों में अग्रगण्य देशबन्धु चित्तरंजनदास, लार्ड सत्येन्द्रप्रसन्नसिंह, श्रीयुत हसनइमाम साहब और सर गणेशदत्त आदि महानुभाव थे। इन सबके ऊपर राजेन्द्र बाबू का काफ़ी प्रभाव था। राजेन्द्र बाबू की क़ानून की प्रतिभा को देख कर श्रीयुत दास बाबू ने कहा था कि "यदि राजेन्द्र बाबू वकालत में लगे रहे तो इनकी प्रतिभा का कोई पूर्ण रीति से मुक़ाबला नहीं कर पावेगा।" आपकी विद्वत्ता, और बारीकियों के कारण आपका नाम बंगाल के सभी वकीलों में प्रसिद्ध हो गया। आपको कुछ दिनों डाक्टर सर रासविहारी घोष के साथ काम करने का अवसर मिला। आपकी अध्ययन

शीलता, गंभीरता और लगन के कारण डाक्टर रासविहारी घोष बड़े प्रभावित हुये और सदैव राजेन्द्र बाबू को उत्साहित करते रहते थे। आपने अपने परिश्रम और गम्भीरता के कारण कलकत्ता की सुशिक्षित सभ्य मण्डली के हृदय में अपना स्थान जमा लिया था। उन्हीं दिनों—अर्थात् सन् १६१५ ई० में आपका विचार एम० एल० की परीक्षा में बैठने का हुआ। उस समय आपके सहपाठी गया ज़िला के सुप्रसिद्ध बाबू वैद्यनाथ नारायण-सिंह थे। आपके उत्साहित करने के कारण ही राजेन्द्र बाबू उपर्युक्त परीक्षा में बैठने को तैयार हो गये। जब आपने अध्ययन आरम्भ कर दिया, तब बाबू नारायणसिंहजी ने आपसे कहा कि राजेन्द्र बाबू यदि आप थोड़ी भी मेहनत कर डालें तो आपका स्थान एम० एल० परीक्षा में भी सदैव की तरह प्रथम आ सकता है। वैद्यनाथजी की बात राजेन्द्र बाबू के ऊपर पूर्ण प्रभाव दिखा गई। आपने एम० एल० परीक्षा की पूर्णतया तैयारी की और सदैव की तरह कलकत्ता विश्व-विद्यालय भर में आपने प्रथम स्थान प्राप्त किया।

आपने कलकत्ता हाईकोर्ट में सन् १६१६ ई० तक वकालत की और इतने कम अर्से में ही आपकी ख्याति दूर-दूर तक हो गई। इसके पश्चात् पटना में भी हाईकोर्ट खुल गया और राजेन्द्र बाबू अब कलकत्ता छोड़कर पटना चले आये। पटना में भी आपने थोड़े ही दिनों में खूब शोहरत प्राप्त की। आपका कमरा सदैव मुवक्किलों से भरा रहता था। आपके पास जितना रुपया

आता था उससे आप अधिकतर गरीब विद्यार्थियों की आर्थिक सहायता करते थे। आपकी वकालत की आमदनी से कभी घर वालों को अधिक लाभ नहीं हो पाया। सन् १९१६ के बाद तो आपकी वकालत की आमदनी तीन हज़ार रुपये मासिक थी जिसे सदैव ही गरीब विद्यार्थियों की फ़ीस तथा किताबों में व्यय किया जाता था। मगर जिस समय महात्मा गांधीजी ने देश के लोगों से वकालत छोड़ने की अपील की थी, उसी समय राजेन्द्र बाबू ने वकालत को सदैव के लिये छोड़ दिया। जिस समय राजेन्द्रबाबू ने वकालत छोड़ी थी, उस समय आपके बैंक में केवल १५) ही जमा निकले। इससे आपकी परोपकारिता, त्याग, तपस्या और दीनबन्धुता का पता चलता है। आपको गरीब बिहारी विद्यार्थी सदैव ही घेरे रहते थे। आपने अपने जीवन में शायद ही किसी विद्यार्थी को निराश किया हो। यदि थोड़े से पूँजीपति विद्यार्थियों की दीन दशा पर विचार करें तो देश की शिक्षा का एक बहुत बड़ा अंग पूर्ण किया जा सकता है।

भारतीय सेवा दल

यों तो बाबू राजेन्द्रप्रसाद विद्यार्थी-जीवन से सार्वजनिक कार्यों में संलग्न रहते, मगर सबसे अधिक कार्य आपने १९०६ ई० के स्वदेशी आन्दोलन में किया, जिसके कारण आपका यश देश में दूर दूर तक फैल गया। जब आप भूमिहार कालेज में अध्यापक थे, तब तो आपकी सारी कमाई गरीब

विद्यार्थियों के कार्यों में ही व्यय होती थी। जिस समय आप भूमिहार कालेज में अँग्रेजी के अध्यापक थे, उन्हीं दिनों महात्मा गोखले का विचार था कि बिहार में भी कुछ नवयुवकों के अन्दर सार्वजनिक सेवा करने की भावना फैलाई जाय, ताकि उन सार्वजनिक कार्यकर्ताओं से सर्वेण्ट ऑफ़ इण्डिया सोसायटी का कार्य लिया जा सके और नवयुवक अपने आपको देश की सेवा के लिये अर्पण करदें। उन दिनों स्वर्गीय श्रीमान् बाबू परमेश्वरलालजी बिहार के अग्रगण्य नेता थे। स्वनाम धन्य महात्मा गोखले ने आप ही से बिहारी नवयुवकों की माँग पेश की थी। परमेश्वरलालजी ने राजेन्द्रबाबू से बिना पूछे ही महात्मा गोपालकृष्ण गोखले से कहा कि आप राजेन्द्र बाबू को लिखिये वे आपके कार्य को बिहार में सुचारु रूप से सम्पादित कर सकेंगे। उनके समान त्यागी तपस्वी नवयुवक बिहार प्रान्त में कोई दूसरा नहीं है। इधर बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी से श्री परमेश्वरलालजी ने कहा कि आप से महात्मा गोखले मिलना चाहते हैं। जब महात्मा गोखले राजेन्द्र बाबू से मिले, तब आपने राजेन्द्र बाबू से सर्वेण्ट ऑफ़ इण्डिया सुसायटी में सहयोग देने की प्रार्थना की। मगर राजेन्द्र बाबू से यह किस प्रकार आशा की जा सकती थी कि वे बिना विचार किये हुये ही श्रीमान् महात्मा गोखले को एकदम उत्तर दें। तो भी आपने महात्मा गोखले से नम्र शब्दों में निवेदन किया, कि मैं विचार करके आपके प्रश्न का उत्तर दे सकूँगा। बाबू राजेन्द्रप्रसाद

महात्मा गोखले के पास से आकर सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सोसायटी नामक संस्था के नियमों, उपनियमों पर पूर्ण रीति से विचार करते रहे। और अन्त में आपने सम्पूर्ण विचार पत्र में अपने भाई महेन्द्रप्रसादजी को लिख भेजे। बाबू राजेन्द्रप्रसाद को तो महात्मा गोखले का प्रस्ताव मन चाहा था। और हृदय से आप सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सुसायटी के सभासद् बन कर देश की सेवा करना चाहते थे। उनके मन में नहीं था कि देश-सेवा के इस स्वर्ण अवसर को हाथ से जाने दें। बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने पत्र बड़ी नम्र भाषा में लिख कर अपने बड़े भाई को सभा के उद्देश्य समझाये। मगर पत्र का प्रभाव बाबू राजेन्द्रप्रसाद के भाई श्री महेन्द्रप्रसादजी पर तनिक भी नहीं पड़ा। उनके बड़े भाई की मंशा नहीं थी कि राजेन्द्र बाबू सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सुसायटी के आजीवन सदस्य बन कर उसमें कार्य करें। राजेन्द्र बाबू ने अपनी पूर्ण शक्ति से अपने भाई महेन्द्रप्रसाद को समझाया कि उनको सर्वेण्ट आफ इण्डिया सुसायटी में काम करने दिया जाय। मगर बड़े भाई साहब के समझाने में राजेन्द्र बाबू को सफलता नहीं मिली। जब राजेन्द्र बाबू ने देखा कि उनके सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सुसायटी में शामिल होने से भाई महेन्द्रप्रसाद को दुःख होगा, तो आपको सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सुसायटी में काम करने का विचार सर्वथा के लिये छोड़ना पड़ा। यदि उस समय राजेन्द्र बाबू सर्वेण्ट ऑफ इण्डिया सुसायटी के सदस्य बन गये होते तो आज हम राजेन्द्र बाबू को राष्ट्रीयता के फहराते

हुये झण्डे के नीचे किस प्रकार देखते। वहाँ पर कार्य करने से राजेन्द्र बाबू से देश का इतना कार्य नहीं हो पाता जितना कि देश के आन्दोलन में आपने किया है।

विहार-विद्यार्थी-संघ

बाबू राजेन्द्रप्रसाद सदैव से आदर्शवादी रहे हैं। आपका विचार है कि जो मनुष्य संसार में कुछ कर्म करना चाहते हैं, उनको चाहिये कि पहले अपने जीवन का आदर्श स्थिर करें। बिना आदर्श के किसी को संसार में अवतक सफलता नहीं मिली। आदर्श पैदा करने की प्रथम अवस्था विद्यार्थी जीवन ही समझना चाहिये। मनुष्य स्वभाव से ही अनुकरण शील होता है। यदि विद्यार्थी-जीवन में उसको आदर्श का अर्थ समझा दिया जाय और यदि कुछ विद्यार्थी भी आदर्शवादी निकल आवें, तो देश का कार्य करने में बड़ी सफलता मिलती है। विद्यार्थी-जीवन ही एक ऐसा जीवन है जिसकी आधारशिला पर जन समुदाय की सफलता मुनहसिर है। शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह, स्वामी दयानन्द, महान अकबर के जो आदर्श बचपन में बन गये उन्हीं के आधार पर उनका सारा जीवन व्यतीत हुआ। शिवाजी की माता ने शिवाजी को वह वीरता का पाठ पढ़ाया, जिसके बल पर हिन्दुओं की बिखरी हुई शक्ति का संघटन करके वह भारतीय संस्कृति की रक्षा कर सके। आज जो विद्यार्थी स्कूल और कालेजों में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं, यदि विद्यार्थी भविष्य जीवन में देश

के नागरिक बनेंगे। यदि विद्यार्थियों के विचार राष्ट्रीय हो चुके हैं, तो संसार में कोई शक्ति ऐसी नहीं कि देश को स्वतंत्रता के मार्ग से हटा सके। इन्हीं बातों पर गम्भीर विचार करके राजेन्द्र बाबू ने अपने जीवन का ध्येय बनाया कि बिहार प्रान्त के विद्यार्थियों का संघठन होना चाहिये। यही आप की प्रथम भावना थी जो आप को विद्यार्थी-संघठन के कार्य में लगा रही थी। जिस समय राजेन्द्र बाबू ने विद्यार्थी संघठन का कार्य किया, उस समय भारत भर में विद्यार्थियों का संघटन किसी भी प्रान्त में नहीं था, और सब से प्रथम राजेन्द्र बाबू ही इस कार्य की ओर अग्रसर हुये। जिस समय राजेन्द्र बाबू ने बिहार-विद्यार्थी-संघ की आधार-शिला रक्खी थी, उस समय उनकी अवस्था केवल २२ वर्ष की थी, और आप एम० ए० क्लास में पढ़ा करते थे। इतनी कम अवस्था में इतना महत्त्वपूर्ण कार्य करना राजेन्द्र बाबू जैसे प्रभावशाली का ही काम है।

सन् १९०६ ई० में लार्ड कर्जन ने बंग भंग के समय बड़ा ही अपमानजनक भाषण दिया था, जिसके कारण विद्यार्थी-वायु-मण्डल में जोश के बादल उमड़ पड़े। बिहार के राजेन्द्र बाबू और उनके मित्रों ने भी उस समय कुछ करने की ठानी। उसी साल उन्होंने बिहारी क्लब में जीवन संचार करने का प्रयत्न किया। बिहारी क्लब की साधारण बैठक की गई, जिसमें निश्चिय किया गया कि बिहारी छात्र-सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन पटना कालेज में किया जाय। बिहारी छात्र-सम्मेलन

उस समय की देश की एक निराली संस्था थी। इस संस्था ने विहार के विद्यार्थी-समाज में पूर्ण रीति से जीवन संचार किया। विहार में स्थान-स्थान पर इसकी शाखा-प्रशाखायें खोली गईं। शाखाओं में वाचनालय, वाद-विवाद सभायें और स्वास्थ्य के लिये अखाड़ों का खोला जाना निश्चय किया। विद्यार्थियों को प्रोत्साहन देने के लिये पुरस्कार बाँटने का पूर्ण प्रबन्ध किया गया। असहयोग आन्दोलन से पूर्व बिहारी विद्यार्थी-संघ का सालाना जल्सा बड़े जोरशोर से होता था। देश के बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेताओं ने इस सभा के सभापति वन कर विद्यार्थियों में जीवन डालने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इस सभा की समय-समय पर लगभग सभी पत्रों ने भली भाँति प्रशंसा की है। उस समय के सुप्रसिद्ध इण्डियन मिरर ने लिखा था कि 'विहार के विद्यार्थियों ने वास्तव में भारत की भावी उन्नति के लिये एक व्यावहारिक कार्यक्रम निश्चय कर के दूसरे प्रान्तों के विद्यार्थियों के सम्मुख एक आदर्श उपस्थित किया है।'

विहार में त्यागी, तपस्वी, देश-भक्त पैदा करने का श्रेय विहारी छात्र-सम्मेलन को ही है। इसी सम्मेलन के प्रयत्न का फल है कि विहार में कितने उत्साही और लगन से कार्य करने वाले राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता हैं। और उन्ही की कार्य शीलता के कारण आज विहार की गणना देश के प्रगतिशील प्रान्तों में है। इस संस्था के जन्म देने वाले हमारे आदर्श कार्यकर्त्ता वाबू राजेन्द्र-प्रसाद ही हैं।

जिस समय राजेन्द्र बाबू ने विद्यार्थीसंघ नामक संस्था को जन्म दिया था, उस समय सम्पूर्ण बिहार प्रान्त में कोई भी राजनैतिक संस्था नहीं थी। इसलिए विद्यार्थी संघ की धाक सरकार तक पर बैठी हुई थी। इसी संस्था का प्रभाव था कि असहयोग आन्दोलन का प्रस्ताव बिहार में पास हो सका था।

विश्वविद्यालय में हिन्दी-सेवा और उसकी उन्नति

लार्ड मैकाले के कार्यक्रम के अनुसार भारत की राज-काज करने की भाषा अँग्रेजी तय हो चुकी थी। जिसका प्रारम्भ में मुख्य उद्देश्य कम्पनी के लिये कुछ अँग्रेजी में जानकारी रखने वाले बाबुओं की आवश्यकता थी। यह क़ानून लार्ड विलियम बैंटिक के समय में पास हो गया था। राजा राममोहन राय भी अँग्रेजी के बड़े जबरदस्त समर्थक थे। और उन्हीं के प्रभाव से अँग्रेजी शिक्षा का प्रचार भारत में होने लगा। सबसे प्रथम बंगाल में हिन्दू कालेज़ की आधारशिला रक्खी गई और कालेज से निकले हुये विद्यार्थियों को ऊँचे पद मिलने लगे। जब अन्य लोगों ने अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों को अफ़-सर बनते देखा तो वे अपने लड़कों को भी अँग्रेजी शिक्षा देने लगे। मगर अंग्रेजी से देश को विशेष लाभ नहीं हो सका। जिस विषय को भारतीय विद्यार्थी भारतीय भाषा में पढ़ाया जाने पर एक साल में समाप्त कर सकता था, अँग्रेजी भाषा के कारण उस विषय को विद्यार्थी चार साल में भी समाप्त नहीं कर सकता? भाषा पर आधिपत्य जमाने में ही विद्यार्थियों

का अधिक समय निकल जाता है। अँग्रेजी शिक्षा के इन अव-गुणों से राजेन्द्र बाबू भली भाँति परिचित थे। जिस समय पटना में पटना विश्वविद्यालय की स्थापना हुई, तो राजेन्द्र बाबू भी सिनेट के सभासद् बनाये गये। राजेन्द्रप्रसाद का उद्देश्य पटना विश्वविद्यालय को आदर्श विद्यालय बनाना था। और इस कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के लिये आपने परिश्रम करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। पटना विश्वविद्यालय भारत के विश्वविद्यालयों में सबसे प्रथम विश्वविद्यालय था, जिसमें ऐन्ट्रेन्स तक के सब विषय विद्यार्थी हिन्दी में लिख सकते थे। केवल अँग्रेजी का पर्चा ही अँग्रेजी में लिखना पड़ता था। इस सुव्यवस्था के श्रेय के भागी बाबू राजेन्द्र प्रसाद ही कहे जा सकते हैं।

सन् १६११ ई० में सम्राट् जार्ज पंचम ने विहार को बंगाल से अलग करने की घोषणा दिल्ली दरबार में की। जिसके अनु-सार सन् १६१२ ई० में बिहार प्रान्त बंगाल से अलग किया गया। प्रान्त के अलग होने के कारण विश्वविद्यालय का प्रश्न आया। विश्वविद्यालय खोलने के उद्देश्य से चैथम कमेटी की स्थापना की गई। इस कमेटी ने विश्वविद्यालय का जो रूप रक्खा था, वह एक दृष्टि से नहीं बल्कि अनेक दृष्टियों से हानि-कर सिद्ध हो गया था। उस कमेटी के नियमानुसार कुल प्रान्त में केवल कुछ व्यक्तियों को ही उच्चशिक्षा मिल पाती, और शेष जनता को शिक्षित होने का अवसर तक नहीं मिलता। यदि

चैथम कमेटी की रिपोर्ट स्वीकार करली जाती तो बिहार के ग़रीब विद्यार्थियों को एक प्रकार से शिक्षा का द्वार बन्द ही हो जाता।

इस चैथम कमेटी की रिपोर्ट का अध्ययन करके राजेन्द्र बाबू ने जनता के सम्मुख कमेटी का कार्यक्रम रक्खा, और जनता को पूर्ण रीति से समझा दिया कि कमेटी का उद्देश्य शिक्षा का विस्तार नहीं बल्कि शिक्षा को इतना संकुचित कर देना है कि बिरले ही आगे के ज़माने में शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। उसी वर्ष मुंगेर में छात्रसम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन होना निश्चय हुआ। राजेन्द्र बाबू ने बिहार के सम्पूर्ण विद्यार्थियों के सामने चैथम कमेटी की पोल खोल कर रख दी। मगर कमेटी ने राजेन्द्र बाबू के बतलाए हुए दोषों पर विशेष ध्यान नहीं दिया, और बड़ी कौंसिल में उसी मसौदे के आधार पर पटना विश्वविद्यालय बिल पेश किया गया।

मगर राजेन्द्रबाबू भला इस प्रकार की बातों से कब हिम्मत हारने वाले थे। आपने इस बिल के ख़िलाफ़ समस्त बिहार में आन्दोलन आरम्भ कर दिया। केवल इसी बिल का विरोध करने के लिये विहार प्रान्तीय ऐसोसियेशन का एक विशेष अधिवेशन बुलाया गया। अधिवेशन में से बड़े-बड़े आदमियों की एक कमेटी महज इस बिल पर विचार करने की गरज से बनाई गई थी। इसके सिवा जनता में बिल के दोषों की जानकारी कराने के लिए बहुत से पर्चे बाँटे गये, ताकि बिहारी

जनता विश्वविद्यालय की अनुचित कार्यवाही को अच्छी तरह से समझ सके। बिहार विश्वविद्यालय के विरोध में राजेन्द्रबाबू ने ऐसे उत्साह से कार्य किया कि बिहार के लगभग सभी बड़े आदमी राजेन्द्रबाबू के परिश्रम, योग्यता, लगन का सिक्का मान कर उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। जब बिहार सरकार ने देखा कि बिहारी जनता में बिहार विश्वविद्यालय के ख़िलाफ़ काफ़ी जोश है, तब उसने हार कर उसमें बहुत से वेही सुधार किये जिनको राजेन्द्रबाबू ने आरम्भ में ही बतलाया था। इन सुधारों के कारण पटना विश्वविद्यालय हमारे देश के बहुत से विश्वविद्यालयों की अपेक्षा बहुत आगे बढ़ गया। जब विश्वविद्यालय खुला, तब बाबू राजेन्द्रप्रसाद को भी उसके सिनेट का सभासद् नियुक्त किया गया। अपनी तपस्या, त्याग, गम्भीरता, उच्च विचारिता और लगन के कारण आपका स्थान विश्वविद्यालय के प्रमुख सभासदों में और विश्वविद्यालय की प्रायः सभी उपसभाओं में भी था। विश्वविद्यालय के नवीन नियम स्त्रियों के लिये नये पाठ्यक्रम का बनवाना राजेन्द्र बाबू का ही कार्य था। आप पटना विश्वविद्यालय में अनेक विषयों के परीक्षक भी रहा करते थे। आपने सदैव इस बात का ध्यान रक्खा, कि जहाँ तक हो सके विश्वविद्यालय के प्रत्येक विभाग में व्यय कम से कम किया जाय; ताकि भारत के ग़रीब से ग़रीब विद्यार्थी भी उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त कर सकें। राजेन्द्र बाबू का विचार था कि 'राष्ट्रीयता झोपड़ों में पैदा होती है और

उसका अन्त महलों में होता है'। यदि शिक्षा की सीमा केवल बड़े अथवा पैसे वाले लोगों तक ही रही तो उसका प्रचार जन-साधारण में न हो सकेगा, और उसे दीन इलाही की तरह थोड़े समय में ही समाप्त किया जा सकता है। यदि शिक्षा सर्व साधारण में फैल गई, तो अँग्रेज राजनीतिज्ञों की सारी चालें साधारण जनता के कर्ण-कुहरों तक पहुँचाई जा सकती हैं, और भारत का प्रत्येक मनुष्य अँग्रेजों की चालें समझ सकेगा। मगर जितने बड़े-बड़े आदमियों को सरकार किसी काम में नियत करती है, वे अपना मुख्य उद्देश्य और अपनी प्रतिष्ठा सरकार की हाँ में हाँ मिलाने में ही समझते हैं। सन् १९१७ की बात है पटना विश्वविद्यालय का बजट पेश किया गया। मगर सिनेट के किसी भी सभासद् की हिम्मत न हुई कि बजट में से कुछ काट-छाँट कर सके। उस समय अकेले राजेन्द्र बाबू ही ने अपनी निर्भयता तथा योग्यता के कारण बजट में से काट-छाँट कराई थी। देश की दीन दशा देख कर राजेन्द्रबाबू ने १९१७ ई० में ही कहा था कि विश्वविद्यालय के रजिस्टरार का वेतन एक हजार से घटा कर पाँच सौ रुपया कर दिया जाय। मगर उस समय सरकार के ध्यान में राजेन्द्रबाबू की बात न जची, और रजिस्टार के वेतन में कमी नहीं की गई। राजेन्द्र प्रसाद को विद्यार्थी जीवन से अँग्रेजी द्वारा शिक्षा देने की बुराइयों का अच्छा अनुभव था। विद्यार्थियों को विदेशी भाषा के कारण अधिक परेशानी उठानी पड़ती है। यदि विश्वविद्यालय

के सम्पूर्ण विषय अँग्रेजी के बजाय हिन्दी में पढ़ाये जायँ तो इतने समय में ही योग्य से योग्य विद्वान् बना कर विद्या का अधिक से अधिक प्रचार किया जा सकता है। राजेन्द्र बाबू का मत था कि शिक्षा का माध्यम हिन्दी होना चाहिये। इसके लिये आप निरन्तर प्रयत्न करते रहे। आपके सतत परिश्रम का फल यह निकला कि सन् १६२० ई० में देशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये एक सभा निश्चित की गई। और राजेन्द्र बाबू ने उसी साल नवम्बर में सिनेट के सम्मुख यह प्रस्ताव रक्खा कि ऐण्ट्रेंस तक शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी न होकर हिन्दी में रक्खा जाय। अपने प्रस्ताव के पक्ष में आपने बड़ा सारगर्भित भाषण दिया। उसका प्रभाव सदस्यों पर इतना पड़ा कि प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हो गया। उस समय तक ऐसा प्रस्ताव भारत के किसी भी विश्वविद्यालय में नहीं रक्खा गया था। पटना विश्वविद्यालय के लिये यह बात गौरव की सिद्ध हुई और इसका प्रभाव सभी विश्वविद्यालयों पर इतना पड़ा कि सभी ने ऐण्ट्रेंस तक विषयों को धीरे-धीरे हिन्दी में पढ़ाना स्वीकार कर लिया है।

जब तक राजेन्द्र बाबू पटना विश्वविद्यालय की सिनेट के सभासद् रहे, तब तक आपने जितने कार्य किये सब विद्यार्थियों को दृष्टि में रख कर ही किये। पटना विश्वविद्यालय में जितने सुधार हुए, उन सबका श्रेय केवल राजेन्द्र बाबू को ही है।

चम्पारन सत्याग्रह

चम्पारन राजा जनक की जन्मभूमि है। आजकल चम्पारन जिस प्रकार सुन्दर बगीचों से सुशोभित है, उसी प्रकार सन् १६१६ ई० से पूर्व वहाँ नील के खेत दिखाई दिया करते थे। उस समय वहाँ का क़ानून था कि प्रत्येक किसान को एक बीघे में ३ कट्ठा नील ज़मीन के मालिक (ज़मींदार) के लिए बोनी पड़ती थी। और नील की उपज किसान की न होकर ज़मीन के मालिक की होती थी। सरकारी मालगुज़ारी के साथ तीन कठिया का लगान प्रत्येक किसान से अलग लिया जाता था। इसलिए इस प्रथा का नाम कठिया के नाम से विख्यात था।

राजकुमार शुक्ल नामक एक किसान चम्पारन में रहा करता था। इन तीन कट्ठों को राजकुमार बहुत ही बुरा समझता था। ये तीन कट्ठे उसको इतने कठिन थे कि मानो उसके सिर पर आपत्तियों का पर्वत टूट पड़ा हो। जब लखनऊ में अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस का अधिवेशन हो रहा था, उस समय राजकुमार शुक्ल ने महात्मा गान्धीजी को पकड़ा और उनसे कहा कि आपको चम्पारन के किसानों की कष्ट-गाथा बाबू ब्रजकिशोर बतलावेंगे। वे यह सब बातें कहते जाते थे और महात्माजी से चम्पारन देखने की प्रार्थना कर रहे थे वकील बाबू ने किसानों की कष्ट-गाथा महात्मा जी के सम्मुख मर्मभेदी शब्दों में वर्णन की। उसको सुनकर महात्माजी ने कहा था कि जब तक मैं स्वयं चल कर उनकी

दयनीय दशा को अपनी आँखों से न देख लूँ तब तक इस विषय में मुझ से क्या सलाह ली जा सकती है। आप इस बात को महासभा के सामने पेश कीजिये, और मुझे अभी क्षमा करने की कृपा कीजिये। राजकुमार शुक्ल की इच्छा थी कि महासभा से सहायता मिले। बाबू ब्रजकिशोर ने चम्पारन के किसानों के कष्ट की गाथा सुनाई और महासभा से सहानुभूति का प्रस्ताव पास हो गया।

राजकुमार शुक्ल को इससे प्रसन्नता तो अवश्य हुई, परन्तु इतने से उसके मनको सन्तोष कहाँ? वह बार-बार महात्माजी से यही निवेदन करता था कि आप कृपा करके अपनी आँखों से तो एक बार चम्पारन की अवस्था देख लीजिये। आप तो एक दो दिन में ही सब कुछ समझ लेंगे। महात्माजी ने राजकुमार शुक्ल से कहा कि मुझको फलाँ तारीखों में कलकत्ते जाना है। उसी समय तुम मुझको वहाँ पर ले जाना। जैसे ही महात्माजी कलकत्ते पहुँचे वैसे ही क्या देखते हैं कि राजकुमार उनसे पहले ही वहाँ मौजूद है। उसको देखते ही महात्माजी ने कहा कि यह किसान है तो अशिक्षित परन्तु विचारों का बड़ा दृढ़ है। आख़िरकार इसने युद्ध को जीत ही लिया। सन् १९१७ ई० में महात्मा गान्धी और राजकुमार चम्पारन को रवाना हुए। दोनों देखने में किसान से ही प्रतीत होते थे। दोनों की जोड़ी एक सी थी। वह महात्माजी को राजेन्द्रबाबू के घर पर ले गया। परन्तु राजेन्द्रबाबू कहीं बाहर गये थे। उनकी कोठी पर एक दो

नौकर थे। महात्माजी के पास खाने-पीने का लगभग सभी सामान मौजूद था। महात्माजी को केवल थोड़े से खजूरों की आवश्यकता थी, जिन्हें राजकुमार शुक्ल बाज़ार से ख़रीद लाया।

उन दिनों बिहार में छूतछात के भूत ने अपना पूर्ण साम्राज्य स्थापित कर रक्खा था। यदि महात्माजी की बाल्टी के पानी का छींटा किसी नौकर की बाल्टी पर पड़ जाता तो उनकी बाल्टी बिलकुल ही अपवित्र हो जाती।

उसी दिन शाम की गाड़ी से राजकुमार शुक्ल और महात्मा जी मुजफ्फरपुर को रवाना हो गये। आचार्य कृपलानी उन दिनों मुजफ्फरपुर में ही रहते थे। पहुँचने से पूर्व ही वह अपने शिष्यों के दल समेत स्टेशन पर आ गये। मगर उनके घरबार कुछ न था, वे अध्यापक मलकानी के यहाँ रहा करते थे। महात्माजी को भी वहीं ले गये। आचार्य कृपलानी ने विहार के तिरहुत के किसानों की दीन दशा का वर्णन किया, और जो जो कठिनाई महात्माजी के काम में आने वाली थीं उनको भी बताया। कृप-लानीजी का बिहारियों से घनिष्ट संम्बन्ध स्थापित हो गया था। उन्होंने महात्माजी के काम की बात उनसे पहले ही कर रक्खी थी। सुबह होते ही एक वकीलों का दल महात्माजी के पास आया। वकील लोगों ने महात्माजी से प्रार्थना की कि आप जिस कार्य के लिए यहाँ आये हैं वह कार्य इस स्थान से नहीं किया जा सकता। आपको तो वकील मण्डल के मध्य में अपना डेरा लगाना चाहिये था। गया बाबू यहाँ के मशहूर वकील हैं,

उन्हींके अनुरोध से हम आपको उनके यहाँ ठहरने की प्रार्थना कर रहे हैं, हम सब लोग तो सरकार से डरते हैं। मगर जो कुछ हमसे मदद हो सकेगी आपको अवश्य देंगे। हमको दुःख है कि हमारे नेता बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा बाबू ब्रजकिशोर-प्रसादजी यहाँ पर नहीं हैं। इन लोगों के आने पर आपको प्रत्येक प्रकार की सहायता जी खोल कर दी जायगी। आप कृपा करके गया बाबू के यहाँ पधारें।

महात्माजी तो गया बाबू के ठहरने को तैयार थे, मगर यह सोचकर उनके यहाँ जाने में संकोच करते थे कि कहीं उनके कारण गया बाबू पर कोई आपत्ति न आ जाय। मगर राम-नवमी बाबू ने इस विषय में उन्हें निश्चिन्त कर दिया। तब वे गया बाबू के यहाँ गए। गया बाबू तथा उनके परिवार ने अपने व्यवहार द्वारा महात्माजी को मंत्र मुग्ध सा कर दिया।

अब राजेन्द्र बाबू भी पुरी से और बाबू ब्रजकिशोर जी दरभंगा से आये। बाबू राजेन्द्रप्रसाद की नम्रता, सरलता, सहृदयता, भलमनसाहत, असाधारण श्रद्धा देखकर महात्माजी का हृदय आनन्द से पुलकित हो गया। बाबू राजेन्द्रप्रसाद की वकील मण्डली से महात्मा जी का सदैव को सम्बन्ध स्थापित हो गया। बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने उनका पूर्ण परिचय सब स्थितियों से करा दिया था। वे गरीब किसानों की आन्तरिक अवस्था के पूर्ण रीति से ज्ञाता थे। वे सदैव से किसानों की मदद करने को सन्नद्ध रहते। मगर त्यागी, तपस्वी होते हुये भी

राजेन्द्र बाबू किसानों से फ़ीस लेने में कभी संकोच नहीं करते और कहा करते थे कि यदि हम फ़ीस नहीं लेंगे तो हमारा संसारी ख़र्चा कहाँ से चलेगा। यदि पेशे के काम में फ़ीस न ली जाय तो हमारा संसारी खर्च नहीं चल सकता और हम लोगों की सहायता भी नहीं कर सकते, यह उनकी दलील थी। महात्माजी ने चम्पारन के मुकद्दमों की अधिकतर मिसलों को देखने के पश्चात् बिहार के वकीलों से कहा कि आप लोगों के इस प्रकार लड़ने से तो किसानों को केवल नाम मात्र का लाभ होगा, क्योंकि यहाँ की रैयत काफ़ी तौर पर कुचली गई है। मगर मैं तो जब तक तीन कट्ठा प्रथा का पूर्णतया अन्त नहीं कर दूँगा तब तक आराम से नहीं बैठ सकता। मेरी समझ में यह कार्य जल्दी से पूर्ण नहीं होगा, इसके लिये तो कम से कम दो वर्ष की आवश्यकता है। और मैं यह भी पूर्ण रीति से समझ गया हूँ कि सबसे प्रथम मुझको क्या काम करने की आवश्यकता है।

चम्पारन की जाँच का इतिहास विस्तार के साथ "चम्पारन में महात्मा गान्धी" नामक पुस्तक में है, जिसको त्यागमूर्ति बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने स्वयं लिखकर जनता के हित की दृष्टि से प्रकाशित करा जनता का उपकार किया। प्रत्येक कार्य के लिये सबसे प्रथम रुपये की आवश्यकता हुआ करती है। इस कार्य के लिये रुपये की आवश्यकता पड़ती तो राजेन्द्र बाबू की मण्डली आपस में वकीलों से चन्दा इकट्ठा कर लिया करती। डाक्टर

प्राणजीवन ने लिख भेजा था कि जितने रुपये की आपको आवश्यकता पड़े मुझ से मँगा लीजिये, इसलिये अब महात्माजी को रुपये की कोई विशेष चिन्ता नहीं थी। मगर महात्मा जी का ऐसा कहना था कि चम्पारन के किसानों अथवा किसी आदमी से इस कार्य के लिये रुपया न माँगा जाय। मगर बिहार के उन लोगों से—जो सम्पन्न हैं और बिहार से बाहर रहते हैं—सहायता ली जाय। मगर इस कार्य के लिये रुपये की कोई कमी नहीं पड़ी और काम समाप्त करने पर लगभग एक हज़ार रुपये के बच रहा। उन दिनों ऐसे कार्य के लिये अपना मकान किराये पर भी देने की लोगों में हिम्मत न थी। मगर बाबू राजेन्द्रप्रसाद और ब्रजकिशोर बाबू ने एक लम्बा-चौड़ा मकान किराये पर ले लिया और सब कार्यकर्त्ता उसी मकान में चले गये।

मगर उन लोगों के रहने का ढंग महात्माजी की नज़र में तमाशा जरूर था। हर एक वकील का एक नौकर, और एक ब्राह्मण था। इन सब लोगों की रसोई अलग-अलग रात के बारह बजे तक बनती रहती थी। इस प्रकार सबका समय भी अधिक नष्ट होता था और खर्च भी अधिक होता। इसलिये अन्त में यह निश्चय हुआ कि सब नौकरों को विदा कर के दो तरह की रसोई का प्रबन्ध किया जाय। इस प्रकार करने से अब सब लोगों को कार्य करने के लिये समय भी अधिक मिलने लगा और किफ़ायत से भोजन का प्रबन्ध भी हो गया।

और चम्पारन के किसानों का कार्य सुचारु रूप से होने लगा।

महात्माजी का साथ

महात्मा गान्धीजी ने अपनी स्वयं लिखित आत्म कथा में बाबू राजेन्द्रप्रसाद के लिये लिखा है—"बाबू राजेन्द्रप्रसादजी और ब्रजकिशोर बाबू की जोड़ी अद्वितीय थी। अगर ये लोग न होते तो मैं एक पग भी आगे न रख सकता था। राजेन्द्र बाबू की तपस्या, कार्य शीलता, और लगन तथा सहृदयता और उनके प्रेम ने ही मुझे ऐसा अपंग बना दिया था। राजेन्द्र बाबू के शिष्यों अथवा साथियों में शम्भू बाबू, अनुग्रह बाबू, धरणी बाबू, रामनवमीबाबू गया, बाबू, ब्रजकिशोर बाबू इत्यादि वकील प्राय मेरे साथ रहते थे। विन्ध्या बाबू और जनकधारी बाबू बीच में आ जाते थे। यह तो हुआ बिहार संघ।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद विद्यार्थी जीवन से सदा देश के कार्य करने के लिये अग्रगण्य रहते आये हैं। विद्यार्थी जीवन से देश सेवा करने के कारण आपका यश बिहार में भली प्रकार फैल चुका था। आपको बिहार की जनता आजकल ही नहीं बल्कि १९१७ ई० से अपना हितैषी, देश-भक्त नेता समझती रही है। राजेन्द्र बाबू भी अपने आदर्श के अनुसार अपने जीवन के हेतु वकालत में लगे हुये थे। मगर जिस रूप में आज हम राजेन्द्र बाबू को देख रहे हैं, इस जीवन का आरम्भ सन् १९१७ ई० में महात्मा गान्धी के चम्पारन सत्याग्रह के समय से ही समझना चाहिये।

महात्मा गान्धी के चरणों में बैठ कर ही राजेन्द्र बाबू ने अहिंसा अथवा सत्य के स्वरूप को भली भाँति समझा है। तभी से उनकी सारी भावनायें कार्य में परिणत हो चुकी हैं। तभी से महात्माजी के लिये बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी सदैव ही—

"तुम समान तुम ही लखत और कहा कहि चित भरे।
प्रताप, शिवा अरु मेज़िनी किन-किन सौं उपमा करै॥"

के उपर्युक्त विचार धारण करके महात्माजी की आज्ञानुसार देश के कार्य में दिन प्रतिदिन अग्रसर होते चले आ रहे हैं। महात्माजी के चम्पारन पहुँचने से पूर्व ही राजेन्द्र बाबू तथा उनकी मण्डली किसानों की समस्या को भली प्रकार समझने में लगी हुई थी। इस बात को महात्माजी ने भी अपनी आत्म-कथा में स्वीकार किया है कि "मुझको राजेन्द्र बाबू तथा ब्रजकिशोर बाबू के शिष्य कहें अथवा साथी। अगर वे लोग न होते तो मैं एक पग भी नहीं आगे रख सकता था।" राजेन्द्र बाबू की तपस्या का फल है कि आज बिहार में, शम्भू बाबू, अनुग्रह बाबू, धरणी बाबू, रामनवमी बाबू, श्रीकृष्ण बाबू अथवा जगलालजी को हम इस रूप में देख रहे हैं। इन सब लोगों को बिहारी विद्यार्थी संघ रूपी वृक्ष के फल समझना चाहिये। इन्हीं लोगों की तपस्या के कारण ही बिहार के ग़रीब किसानों का तीन कट्ठे नील से सदैव के लिये पीछा छूट सका। महात्माजी ने स्वयं स्वीकार किया है कि मेरे बिहार के साथी परीक्षा पास किये हुये प्रेमी और सच्चे राष्ट्रीय नेता हैं। महात्माजी के साथ राजेन्द्र बाबू की

वकील मण्डली भी बिलकुल ग्रामीण बन कर ही तीन कट्ठे नील का अन्त कर सकी। चम्पारन में राजेन्द्र बाबू ने भली प्रकार से समझ लिया था कि जब तक अपने आपको ग्रामीण जनता में नहीं खपा देंगे तब तक देश की उन्नति होना बड़ी टेढ़ी खीर है। बिना इस प्रकार के नेताओं के देश कभी भी स्वावलम्बी नहीं हो सकता। इसी विचार का विस्तार पूर्ण पाठ राजेन्द्रप्रसादजी ने महात्माजी के चरणों में बैठ कर सीखा और उसका सच्चा सबूत अब हम इतने दिनों बाद बिहारी मंत्रि-मण्डल में देख रहे हैं।

नवीन सुधार के अनुसार जहाँ पर कांग्रेस का बहुमत रहा है वहाँ के मंत्रि-मण्डल में बिहार का मंत्रि-मण्डल उत्तरीय भारत में एक ऐसा मंत्रि-मण्डल है जहाँ पर अछूतों को भी हम अपने बीच में मंत्री के पद पर पाते हैं। अछूत मंत्री बाबू जगलालजी भी हमारे बड़े भारी राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता हैं और आपको इतना बढ़ाने का श्रेय बिहारी गान्धी राजेन्द्र बाबू को ही है। महात्माजी ने अपने सत्याग्रह संग्राम का सबसे प्रथम प्रयोग बिहार में चम्पारन में किया था। तब से आज तक हम राजेन्द्र-बाबू को महात्माजी के साथ एक कर्मनिष्ठ सच्चे सेवक के रूप में देख रहे हैं।

महात्माजी के साथ कार्य करने पर राजेन्द्र बाबू को अनुभव हुआ है कि भारत के ग्रामों में असली सुधार करने के लिये किस प्रकार की वेश-भूषा अथवा कार्यप्रणाली की आवश्यकता

है। उसी समय से आपने छुआछूत के भूत को बिहार से एकदम निकालने का प्रयत्न कर दिया और तभी से आपने अपने प्रत्येक कार्य में कुछ अछूतों को भी रक्खा है। स्वावलम्बन का सच्चा सबक़ भी राजेन्द्र बाबू को चम्पारन सत्याग्रह से ही मिला था।

जब महात्माजी मोतीहारी में थे तब दिन भर तो सब कार्यकर्त्ता काम में लगे रहते, रात को नौ बजे कहीं काम से अवकाश मिलता। उस समय मकान का सामान उठाने के लिये भला मजदूर किस प्रकार से मिल सकते थे। ऐसी अवस्था देख कर महात्माजी ने स्वयं सामान ढोना शुरू किया। बस फिर क्या था, राजेन्द्र बाबू भी अपने साथियों समेत कार्य में जुट गये। थोड़ी ही देर में मकान का सामान दूसरे मकान में पहुँचा दिया गया। महात्माजी की देखा देखी राजेन्द्र बाबू भी सब काम अपने हाथ से करने का उद्योग करने लगे। और तभी से राजेन्द्र बाबू ने पानी खींचने के कार्य को ख़ुद अपने हाथ से किया और अपने आपको देहात में कार्य करने के योग्य सिद्ध किया। उन्हीं परिवर्तनों के कारण जो राजेन्द्र बाबू ने महात्माजी के साथ में प्राप्त किये थे आज हम राजेन्द्र बाबू को देश के सच्चे सेवक के रूप में पाते हैं।

बिहार विद्यापीठ की स्थापन।

सन् १९२१ ई० भारत के इतिहास में बड़ी उथल-पुथल और जागृति का समय रहा है। सारे देश में महात्मा गान्धी का बोल

वाला था। महात्मा गान्धी ने स्कूल और कालेज छोड़ने की सलाह विद्यार्थियों को दी। उनके उपदेश के कारण हज़ारों विद्यार्थियों ने स्कूल और कालेज जाना छोड़ दिया। मगर अन्य प्रान्तों में से किसी भी प्रान्त ने कालेज छोड़ने वाले झुण्ड के झुण्ड विद्यार्थियों के पढ़ने लिखने का कोई प्रबन्ध नहीं किया।

राजेन्द्र बाबू तो शुरू ही से विदेशी शिक्षा के विरोधी थे। पटना विश्वविद्यालय की सिनेट में जब राजेन्द्र बाबू थे तब आपके प्रयत्न के कारण ही ऐण्ट्रेंस तक अँग्रेजी को छोड़ कर अन्य विषय हिन्दी में पढ़ाये जाने लगे थे। राजेन्द्र बाबू का शुरू से ही विचार था कि जिस प्रकार की शिक्षा विद्यार्थियों को दी जायगी वे वैसे ही बन जायँगे। इसलिये राष्ट्र की जागृति के लिये राष्ट्रीय शिक्षा मिलना विद्यार्थियों को परम आवश्यक है। इसीलिये जब विद्यार्थी सरकारी स्कूल और कालेज छोड़कर मारे मारे घूम रहे थे, उनका अमूल्य समय व्यर्थ नष्ट न हो, इसको ध्यान में रखते हुए राजेन्द्र बाबू ने राष्ट्रीय विद्यालय खोलने का निश्चय किया, और १० वीं फ़र्वरी सन् १९२१ में विहार विद्यापीठ की स्थापना की। इस राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के चान्सलर स्वर्गीय मौलाना मजहरूल हक़ साहब बनाये गये। मगर उनके लोप होने के कारण बाद में राजेन्द्र बाबू को ही विद्यापीठ का कुलपति बनना पड़ा। आप मौलाना साहब के समय में भी विहार विद्यापीठ के वाइसचान्सलर थे इसलिये मौलाना साहब की मृत्यु से संस्था के कार्य में कुछ

अन्तर नहीं पड़ा क्योंकि राजेन्द्र बाबू को संस्था के काम की पूर्ण जानकारी थी। आरम्भ में तो विहार विद्यापीठ बहुत ही सुन्दर ढंग से चला। योग्य से योग्य अध्यापकों से विहार विद्यापीठ की स्थापना में राजेन्द्र बाबू को सहायता मिली, जिसके कारण इस संस्था को उच्च शिक्षा संस्था का रूप दे दिया गया था। राजेन्द्र बाबू ने स्वयं भी पढ़ाने का कार्य आरम्भ कर दिया था। राजेन्द्र बाबू ने विहार विद्यापीठ को एक महान् और आदर्श विद्या संस्था बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया। इस संस्था में असहयोग के दिनों में बहुत से विद्यार्थी दाखिल हुये। उस समय विहार विद्यापीठ के पास ४१ हाईस्कूल लगभग ५०० के मिडिल स्कूल और प्रायमरी विद्यालय थे। हाईस्कूलों में उस समय ४००० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे थे और नीचे के विद्यालयों में १८००० हज़ार। देश भर में राष्ट्रीय शिक्षा का ऐसा सुन्दर और विस्तार पूर्वक प्रचार कहीं भी नहीं हो पाया। अब तक भी विहार विद्यापीठ के पास बहुत से हाई स्कूल हैं। शिक्षा के इतने प्रचार का श्रेय राजेन्द्र बाबू को ही है।

मगर असहयोग की आँधी के निकल जाने के पश्चात् बहुत से विद्यार्थी तो सरकारी स्कूलों और कालेजों को लौट गये और जो कुछ बचे वे अब तक विहार के राष्ट्रीय आन्दोलनों में राजेन्द्रबाबू के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ाकर कार्य कर रहे हैं। इसी विहार विद्यापीठ की उपज के कार्यकर्त्ता आज विहार में

राष्ट्रीय जागृति में जीवन डालकर देश को आदर्श बना रहे हैं। राजेन्द्रबाबू ने बिहार विद्यापीठ की स्थापना करके बिहार में वह ठोस नींव जमा दी है जिसका भविष्य में हिलना असंभव सा प्रतीत होता है। देश का कार्य लगन के साथ करने के कारण राजेन्द्र बाबू का स्थान महात्माजी से किसी हालत में कम नहीं।

विदेश-यात्रा

जिस समय राजेन्द्र बाबू बी० ए० की परीक्षा में सब से अव्वल आये उस समय आपका विचार था कि विलायत में जाकर बैरिस्टरी पढ़ कर देश में आवें। इसकी आपने तैयारी की मगर पिताजी की बीमारी के कारण उस समय आपको विलायत की यात्रा स्थगित कर देनी पड़ी। इसके पश्चात् आपको विलायत जाने का अवसर १९२८ ई० में मिला। आपकी इच्छा बहुत समय से थी कि योरुप की सैर की जाय और वहाँ के राजनैतिक जीवन से जानकारी की जाय।

आपको हरिबाबू रईस शाहाबाद के केस के कारण विलायत जाना पड़ा। मुक़द्दमे के कार्य में आपको दिन रात जुटा रहना पड़ता था। घूमने-फिरने तक का अवसर नहीं था। मुक़द्दमे के काम को समाप्त करने पर आपने योरुप के मुख्य-मुख्य देश जैसे जर्मनी, फ्रांस, इटली. आस्ट्रिया, स्विटज़रलैण्ड आदि का भ्रमण किया।

जिस समय आप इँगलैंड में हरिबाबू जी के मुक़द्दमे की पैरवी करने में लगे हुए थे, उस समय आपने दीनबन्धु कुमारी लीस्टर से भेंट की। श्रीमती महिला स्लेड ने जो हमारी मीरा बहन की माता हैं आपकी बड़ी आवभगत की। भ्रमण के समय जब आप स्विटज़रलैण्ड गये थे उस समय आपकी भेट रोम्याँरोलाँ से हुई। जिन दिनों आप आस्ट्रिया गये थे उन दिनों आस्ट्रिया के प्रसिद्ध नगर वियाना में युद्ध विरोधी सम्मेलन होने जा रहा था। आप उसमें भारत के प्रतिनिधि की हैसियत से सम्मिलित हुये। आपका विचार था कि इन सिद्धान्तों का पूर्ण प्रचार किया जाना आवश्यक है। आप प्रचार की खातिर आस्ट्रिया की एक सभा में भाषण देने वाले थे कि आपके विरोधियों ने आपके ऊपर हमला किया जिसकी वहाँ के प्रसिद्ध अखबारों ने निन्दा की थी। जिस समय राजेन्द्र बाबू विलायत से भारत लौट रहे थे उसी समय हॉलैण्ड में विश्व-युवक शान्ति-सम्मेलन होने जा रहा था। राजेन्द्रबाबू उस सम्मेलन में भी भारत के प्रतिनिधि की हैसियत से शरीक हुये। आपका वहाँ पर भी बड़ा प्रभावशाली भाषण हुआ। आप जहाँ गये वहीं अपनी योग्यता के कारण आपने देश की धाक जमा दी। मगर इस यात्रा में आपने अपने देश के गौरव का ध्यान सदा रक्खा। योरोप यात्रा के समय भी आप सब वस्त्र विशुद्ध खादी के ही पहनते थे।

हिन्दी साहित्य और राजेन्द्रबाबू

राजेद्रबाबू को लेख लिखने का शौक तो उसी समय से है जब वे स्कूल में पढ़ते थे। पटना में आपने विद्यार्थी संघ नाम की एक संस्था की स्थापना की थी। जिससें विद्यार्थियों के हित की दृष्टि से विद्वान् व्यक्तियों के व्याख्यान होते थे। और जो विद्यार्थी उन भाषणों को सब से उत्तम तरीके से लिखता उसको पारितोषिक दिया जाता था। राजेन्द्र बाबू ने अच्छे-अच्छे निबंध लिखकर बीसियों पारितोषिक प्राप्त किये। बिहारी होते हुए भी आप शुरू से ही हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के सहायक रहे हैं। जब से सम्मेलन का जन्म हुआ है तभी से आप हिंदी साहित्य समिति के सदस्य हैं। समय-समय पर आप प्रांतीय सम्मेलन के प्रधान और कोकोनाड़ा विशेष सम्मेलन के सभापति भी रह चुके हैं। आपका उस समय का भाषण भी बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। उस समय भी आपका विचार था कि भाषा की उन्नति पर ही राष्ट्र की उन्नति निर्भर रहती है, अँग्रेज़ी के तो आप पूर्ण विद्वान् हैं ही मगर अँग्रेज़ी के अलावा हिंदी, बंगला, गुजराती का भी आपको खूब ज्ञान है। राजनीति में विशेष कार्य करने के कारण आपको हिंदी साहित्य की विशेष सेवा का समय नहीं मिलता। इतने पर भी हिंदी के प्रमुख पत्रों में आपके अनेकों लेख निकल चुके हैं। "चम्पारन में महात्मा गांधी" नाम की बहुत ही प्रमाण युक्त पुस्तक आपने लिखी है जिसका अँग्रेज़ी और गुजराती में अनुवाद भी छप चुका है।

सन् १९२० ई० में आपने "देश" नाम का साप्ताहिक पत्र भी हिंदी में निकाला था जिसकी भाषा बहुत ही उच्चकोटि की और विचार बहुत गम्भीर हैं. उस समय आपके पत्र ने हिन्दी और राष्ट्र की बड़ी सेवायें की थीं और बिहार के राजनैतिक जीवन को पूर्ण रीति से संघटित किया और सन् १९३६ ई० में साहित्य सम्मेलन के सभापति की हैसियत से जो भाषण आपने दिया था उसका कुछ अंश हम यहाँ देते हैं। "हिंदी साहित्य सम्मेलन एक बड़ी संस्था है। इसके उद्देश्य ऊँचे हैं और राष्ट्र निर्माण का एक बड़ा अंग इसके जिम्मे है। राष्ट्र का प्राण साहित्य होता है, और उस साहित्य का निर्माण-कर्ता समाज का एक बहुत बड़ा सेवक समझा जाता है। सम्मे-लन ऐसे राष्ट्र सेवियों की संस्था है। इसलिए इसको हम किसी प्रकार से संकुचित अथवा अपने कर्तव्य पथ से विचलित नहीं होने दे सकते। इसकी सेवा के लिए उतने ही त्याग और समय की आवश्यकता है, जितनी किसी भी अन्य सार्वजनिक सेवा के लिए है। हम हिंदी भाषा भाषियों का सौभाग्य है कि हिंदी राष्ट्र भाषा मानी गई है। साथ ही यही बात हम पर कर्तव्य का एक बहुत बड़ा बोझा भी डालती है। क्या हम हिंदी को इस योग्य न बना देंगे कि इसका दावा केवल हिन्दी भाषियों की संस्था पर ही न रह कर, अपने साहित्य के कारण भी यह सर्व-साहित्य हो जाय। संस्था घटती बढ़ती रहेगी, पर साहित्य के अमूल्य रत्न सदा के लिये अमूल्य होते हैं, उनका बाजार में

उतार चढ़ाव नहीं हुआ करता और न इस पर अर्थशास्त्र के वह नियम ही लागू होते हैं जो बहुतायत के कारण किसी वस्तु का दाम घटा दिया करते हैं। हम हिन्दी प्रचार में अपना कर्तव्य पालन करें और साथ ही साथ हिन्दी का वह अमूल्य और स्थायी साहित्य भी निर्माण करें, जो इसे राष्ट्र भाषा का पद दे। सम्मेलन तभी सफल होगा जब इन दोनों अंगों को पूर्ण करने में वह पूरी सफलता पावेगा और वह सफलता हमारे संकल्प और निष्ठा पर ही निर्भर है।" आपने हिन्दी में ग्रन्थ रचना भी की है और एक हिन्दी पत्र का सम्पादन भी, इसके सिवा आप हिन्दी के सामयिक प्रश्नों से भलीभाँति परिचित हैं। साहित्यक झगड़ों से आपका कोई सम्बन्ध नहीं और इसलिये आप इन प्रश्नों पर बिना किसी पक्षपात के अपनी व्यापक दृष्टि भी डाल सकते हैं। आपके भाषण में स्वर्गीय पं० पद्मसिंह शर्मा का भाषा सौन्दर्य नहीं और न स्वर्गीय गणेशशंकरजी विद्यार्थी जैसा ओज। इतने पर भी आपने अपना अभिप्राय स्पष्ट भाषा में प्रकट कर दिया है। अब आपकी सम्मति हिन्दी उर्दू के प्रश्न पर सुनिये।

"आज यह हिन्दी-उर्दू का सवाल भले ही विकट रूप धारण कर रहा हो और मुसलमान हिन्दी नाम से झिझक रहे हैं, लेकिन थोड़ा पीछे की ओर देखने से पता चलता है कि यह हिन्दी नाम मुसलमानों का ही दिया हुआ है। और यह भी किसी मामूली आदमी ने नहीं, वल्कि अमीर खुसरो, मीर तकी, इन्शा,

मलिक मुहम्मद जायसी जैसे विद्वानों ने देने की कृपा की है।"

जो महानुभाव उर्दू शब्दों से घबराते हैं उनके लिये राजेन्द्रबाबू की निम्नलिखित सलाह निहायत मुफ़ीद होगी। आज के युग में जब दुनिया से वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण दूरी और समय का भेद उठता जा रहा है, तो ऐसी दशा में संसार की कोई भी भाषा बिना दूसरी भाषा के अछूती रह सकती है। यदि भाषा ने ऐसा प्रयत्न भी किया तो वह संसार की दौड़ में सबसे पीछे रह जायगी। और उसके लिये उन्नति के दरवाज़े सदा के लिये बंद हो जायँगे। हिन्दी भाषा के गुणों में एक विशेष गुण यह है कि हिन्दुओं की भाषा होती हुई भी उसने अरबी, फ़ारसी के ही नहीं बल्कि तुर्की, पुर्तगाली, और अँग्रेजी के शब्दों को अपने अंग में सदैव के लिये स्थान दे दिया है। दिय ऐसा न होता तो कितने ही शब्द जो हमारे घरों में पहुँच गये हैं, आज न होते और उनके पर्यायवाची शब्द हमारे पास शायद इतने सुगम न मिलते।

अँग्रेजी आज संसार की एक सजीव भाषा है जिसका बहुत प्रचार है और जो संसार के कोने-कोने में पढ़ी और बोली जाती है। उसका शब्दभण्डार इतना बड़ा है और बढ़ता ही जा रहा है कि Oxford Dictionary में जिसके तैयार होने और छपने में कई वर्ष लग गये, कितने ऐसे शब्द नहीं मिलते जो उसके आरम्भ के भागों के

के समय अँगरेज़ी में प्रचलित नहीं हुए थे ! पर जो अन्त के भाग के छपने के समय तक अँगरेज़ी भाषा में ले लिये गये और आज समाचार पत्रों और लेखों में प्रायः दिन प्रति दिन मिला करते हैं। आज से पचास वर्ष पहले के छपे किसी भी अँगरेज़ी कोष को आज के छपे किसी अच्छे कोष से मिला कर देखा जाय, तो पता चलेगा कि आज कितने नये शब्द उस भाषा में ले लिये गये हैं और उसका भण्डार किस तेजी के साथ बढ़ता जा रहा है। यह किसी को कहने की हिम्मत न होगी कि अँगरेज़ी भाषा इन शब्दों के आ जाने से विकृत अथवा दूषित हो गई है, अथवा वह अँगरेज़ी भाषा नहीं रही। जो नये शब्द आये हैं वे सारे संसार की भाषाओं से लिये गये हैं। पुरानी अँग्रेजी में केवल लैटिन, ग्रीक, फ्रेंच, जर्मन आदि के शब्द ही अधिकता से पाये जाते हैं पर अब तो हिन्दी, संस्कृत, अरवी फ़ारसी इत्यादि के अतिरिक्त, तामिल, तिलगू, चीनी, जापानी भाषा के शब्दों तक का समावेश है।

हिन्दी भी जीती जागती भाषा होना चाहती है तो उसे अपने शब्द भण्डार को बढ़ाना पड़ेगा। वहिष्कार की नीति तो वह कदापि स्वीकार ही नहीं कर सकती और न विदेशी शब्दों को वाहर रख कर वह अपनी उन्नति कर सकती है। हिन्दुस्तान में हिन्दू, मुसलमान, पारसी, वौद्ध, यहूदी, ईसाई और सिख वसते हैं तो भी वह हिन्दुस्तान है। इसी प्रकार हिन्दी में सभी भाषाओं के उत्तम उत्तम शब्द हम लेंगे तब भी वह हिन्दी ही रहेगी।

राष्ट्रभाषा के विषय में राजेन्द्र बाबू ने अपने भाषण में कहा "राष्ट्रभाषा से यह अभिप्राय है कि यह अन्तर प्रान्तीय व्यापार और सार्वजनिक व्यवहार से सभी प्रान्तों के रहने वालों द्वारा बरती जाय और कन्याकुमारी से बदरिकाश्रम तक और अटक से कटक तक सभी स्थानों में एक दूसरे के साथ बातें करने और विचार के काम में लाई जाय।"

राजेन्द्र बाबू और कांग्रेस

अपने प्रारम्भिक जीवन से राजेन्द्र बाबू अपने खास विचारों और सिद्धान्तों के सदैव से समर्थक रहे हैं। एक बार कांग्रेस में शामिल होकर वीर सैनिक की भाँति कन्धे से कन्धा भिड़ाकर बराबर देश की अपूर्व सेवा करते रहे हैं। देश में ऐसे भी अनेक महानुभाव देखने में आते हैं जो एक समय सर्व प्रथम कार्यकर्ता थे और आजकल कांग्रेस में कोई उनका नाम तक नहीं जानता। राजेन्द्र बाबू ने विद्यार्थी जीवन से ही कार्य तो देश-सुधार का आरम्भ कर ही रक्खा था मगर पूर्णरीति से आप एम० ए० पास करके सन् १९०६ ई० में ही इसमें शामिल हुए हैं। तब से आज तक कांग्रेस के प्रत्येक अधिवेशन में सम्मिलित होकर देश का कार्य उत्तमता के साथ करना आपका ध्येय रहा है। आप सब से प्रथम प्रतिनिधि बनकर सन् १९१८ में भारतीय कांग्रेस कमेटी में सम्मिलित हुये और उसी वर्ष आप कांग्रेस के सदस्य चुन लिये गये।

सन् १६१६ ई० में रौलट-क़ानून के कारण सम्पूर्ण देश में अशान्ति का अगम्य सागर हिलोरें मार रहा था, जिसके कारण उत्तरीय भारत के सभी शहरों में कुछ लोगों ने अहिंसा के खिलाफ़ कार्यवाही तक कर डाली। मगर बिहार में हड़ताल बिलकुल अहिंसात्मक ढंग से होती रहीं और राजेन्द्र बाबू बिहार को सदैव ठीक रास्ते पर स्वतंत्रता की ओर ले जाते हुये अग्रसर हुये हैं। चम्पारन के सत्याग्रह के कारण राजेन्द्र बाबू को बिहार का बच्चा बच्चा जान गया। उस समय आपकी वकालत हज़ारों रुपये मासिक की थी। उस पर लात मार कर आप देश की सेवा के लिये अपने साथियों समेत अग्रसर हुये। महात्मा जी ने भी उन्हीं दिनों विहार में दौरा किया। उस दौरे के कारण लोगों में अपूर्व उत्साह का संचार हुआ। उस समय सारे प्रान्त का संगठन राजेन्द्र बाबू के हाथ में था। विद्यार्थियों ने महात्माजी के आदेशानुसार कालेज छोड़ना आरम्भ कर दिया। किसी प्रान्त में कालेज के विद्यार्थियों के पढ़ने का प्रबन्ध नहीं था। पर राजेन्द्र बाबू ने विहार विद्यार्थी संघ की स्थापना इससे पूर्व ही कर रक्खी थी। विहारी विद्यार्थियों के समय के सदुपयोग की खातिर राजेन्द्र बाबू ने पटना शहर में विहार-विद्यापीठ नामक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की। उस समय कांग्रेस का कार्य बैजवाड़े में बड़े जोरशोर के साथ किया जा रहा था। सम्पूर्ण देश में कांग्रेस के एक करोड़ सदस्य बनाने का आयोजन था। इसके सिवाय वीस

लाख रुपये तिलक स्वराज्य फण्ड के लिये और बीस लाख में चरखे चलाने का प्रोग्राम था। राजेन्द्र बाबू अपने मित्र तथा शिष्यों को लेकर इस कार्य में पूर्ण रीति से जुट गये। स्थान-स्थान पर कांग्रेस कमेटियाँ की गईं, तिलक स्वराज्य फण्ड में लाखों रुपये जमा किये गये। प्रान्त में लाखों चरखों का कार्य आरम्भ हुआ, खद्दर बिक्री के लिये स्थान-स्थान पर गान्धी खद्दर भण्डार खोले गये, ताकि जनता को हाथ का कता बुना खद्दर उचित क़ीमत पर मिल सके। विदेशी वस्त्र बहिष्कार में भी बिहार उत्तरीय भारत के लगभग सभी प्रान्तों में अगुआ रहा। अपने प्रान्त को राष्ट्रीय लहर में आगे बढ़ाने के लिये राजेन्द्र बाबू ने दिन-रात एक कर दिये।

महात्मा गांधी तो चम्पारन सत्याग्रह के अवसर पर ही राजेन्द्रबाबू की कार्य शक्ति से पूर्ण परिचित थे मगर देश के अन्य नेताओं को राजेन्द्र बाबू की कार्य प्रणाली का पता नहीं था। बिहार के असहयोग आन्दोलन की सफलता देखकर देश के सभी नेता राजेन्द्रबाबू की कार्य प्रणाली से पूर्ण रीति से परिचित हो गये। और सन् १६२१ ई० में राजेन्द्र बाबू अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी की कार्यसमिति के सदस्य चुने गये। इस वर्ष कांग्रेस का अधिवेशन अहमदाबाद में हुआ था। मगर उसी वर्ष चोराचोरी ज़िला गोरखपुर में एक भयानक उपद्रव खड़ा हो गया। उसे देखकर महात्माजी ने असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया, परन्तु राजेन्द्र बाबू पहले के समान ही संगठन के कार्य में संलग्न रहे।

स्वराज्य पार्टी और राजेन्द्र बाबू

सन् १६२२ ई० में विहार प्रान्त के अन्तर्गत गया में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। देशबन्धु चितरंजन दास सभापति बनाये गये। परन्तु गया का अधिवेशन भी नहीं हो पाया था कि महात्माजी को गिरफ्तार कर लिया गया। उनकी गिरफ्तारी के कारण कांग्रेस दो भागों में विभाजित हो गयी। एक दल कांग्रेस का अधिकार कौंसिलों पर चाहता था और दूसरा दल संगठन के कार्यों का समर्थक था। उस साल राजेन्द बाबू को कांग्रेस का प्रधान मंत्री बनाया गया। केवल राजेन्द बाबू और राजगोपालाचार्य के प्रभाव के कारण ही कांग्रेस ने संगठन के कार्य को स्वीकार किया था। प्रधान मंत्री की हैसियत से राजेन्द्र बाबू ने सम्पूर्ण देश में दौरा करना आरम्भ कर दिया ताकि संगठन का कार्य देश में सुचारु रूप धारण कर सके। सबसे प्रथम इस बात का प्रयत्न किया गया कि कांग्रेस के दोनों दल एक कर दिये जावें। मगर इस कार्य में सफलता के दर्शन नहीं हो सके। इस पर कार्य समिति ने इस्तैफा दे दिया। दूसरी कार्यसमिति बनी मगर दूसरी कार्य समिति भी दोनों पार्टियों में मेल नहीं करा सकी। इस पर तीसरी कार्यसमिति बनी जिसने कौंसिल में जाने की आज्ञा देदी। साथ ही सत्याग्रह और संगठन के समर्थकों को भी कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई।

सन् १६२४ ई० में गान्धी जी जेल से छूटे। महात्मा ज

ने काँग्रेस के भेद-भाव को दूर करने का भार स्वराज्य पार्टी को ही सौंप दिया और स्वयं अपने साथियों समेत संगठन के कार्य में जुट गये। महात्मा जी के मुख्य-मुख्य साथियों में राजेन्द्र बाबू भी थे। आरम्भ से ही राजेन्द्र बाबू का पक्का विचार था कि बिना रचनात्मक कार्य किये स्वराज्य मिल ही नहीं सकता। राजेन्द्र बाबू ने तमाम बिहार सूबे में काँग्रेस कमेटी खोलने, राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार, चर्खा संघ द्वारा खद्दर प्रचार का कार्य ज़ोरों से आरम्भ कर दिया। राजेन्द्र बाबू के परिश्रम का ही परिणाम है कि बिहार आज उत्तरीय भारत में सबसे सस्ती खद्दर तैयार करके अपना उदाहरण पेश कर रहा है। राजेन्द्र बाबू ने खद्दर प्रचार में अपने यहाँ सफलता प्राप्त करके दक्षिण भारत में भी खद्दर के लिये दौरा किया और सफलता प्राप्त की। राजेन्द्र बाबू के खद्दर प्रचार के कारण महात्मा जी ने राजेन्द्र बाबू की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

राजेन्द्र बाबू के त्याग, तपस्या और जन-सेवा का ही फल था कि बिहार में स्वराज्य पार्टी बिल्कुल नहीं पनप सकी। जब कार्य समिति ने प्रस्ताव पास कर दिया कि सभी प्रान्तों से कांग्रेसी उम्मेदवार खड़े होंगे तब कहीं बिहार में आदमी कौंसिल के लिये खड़े किये गये। मगर राजेन्द्र बाबू ने स्वयं खड़ा होना स्वीकार नहीं किया। और न आपके विचार में कौंसिल जाना ठीक था मगर जितने आदमियों ने कौंसिल की मैम्बरी की सब लोग बिना राजेन्द्र बाबू की सलाह से कुछ कार्य नहीं

करते थे। इससे पता चलता है कि बिहार के लोगों की राजेन्द्र बाबू में कितनी श्रद्धा है।

देश में राजनैतिक आँधी

राजेन्द्र बाबू महात्मा जी के आदेशानुसार संघठन के कार्य में लगे रहे। इस कार्य क्रम में बिहार के भावी नेता धीरे-धीरे तैयार होने लगे। कलकत्ता काँग्रेस के अधिवेशन पर औप-निवेशक स्वराज्य की मांग भारत सरकार से की गई और कलकत्ता अधिवेशन में यह तय हुआ कि यदि सरकार एक साल के अंदर औपनिवेशिक स्वराज्य की मांग को पूरा न करें तो ठीक एक साल बाद पूर्ण स्वराज्य की मांग के लिये देश को तैयार किया जावे। इस बीच में राजेन्द्र बाबू ने पूर्ण रीति से बिहार का संगठन-कार्य किया, जिसका मूल्य सन् १६२६ के सत्याग्रह के समय काम आया। सन् १६३० ई० में सारे देश में महात्मा-जी की आज्ञानुसार आन्दोलन जोरों के साथ आरम्भ किया गया। अधिकतर प्रान्तों ने नमक बनाकर नमक क़ानून का तोड़ना आरम्भ किया। महात्माजी ने अपने ८० स्वयंसेवकों के साथ साबरमती आश्रम से डंडी को पैदल कूच का डंका बोल दिया। इन्हीं आठ-नौ दिन में लहर देश के एक कौने से दूसरे कौने तक फैल गई। कहीं जब्त शुदा किताबें पढ़ कर क़ानून तोड़े गये, तो कहीं नमक बनाकर। मगर बिहार में उस समय चौकीदारी टैक्स बन्दी व नशीली चीजों का निषेध किया गया। विदेशी

वस्त्र बहिष्कार आदि के कार्यों ने विहार में भी पूर्ण जोर पकड़ा। हजारों आदमी जेल गये, सैकड़ों की जायदादें नीलाम की गईं। सारे देश में वहस हो रही थी कि देश के नाम पर कौनसा प्रान्त कितना त्याग करता है। उस दौड़ में विहार का नम्बर तीसरा था। विहार में इसका श्रेय राजेन्द्र बाबू को ही दिया जाना चाहिये। इस आन्दोलन में राजेन्द्रबाबू कई बार जेल गये, कई बार आपको स्थानापन्न राष्ट्रपति का स्थान ग्रहण करना पड़ा। जिस समय भारत सरकार के साथ क्षणिक सन्धि की वातचीत चल रही थी उस समय काँग्रेस अध्यक्ष राष्ट्ररत्न राजेन्द्र बाबू ही थे उस समय गान्धी इरविन समझौता हुआ था। इसके पश्चात् सन् १९३२ ई० में कांग्रेस का अधिवेशन पुरी में होने वाला था और इस अधिवेशन के सभापति राजेन्द्रबाबू ही बनाये जाने वाले थे, मगर इसी वीच महात्मा गान्धी ने विलायत से लौट कर आन्दोलन फिर से आरम्भ कर दिया और पुरी में कांग्रेस का अधिवेशन नहीं होने पाया।

महात्माजी के महान व्रत का फल

आन्दोलन जब चल ही रहा था, महात्मा गान्धी जेल में ही अछूतों के लिये व्रत कर रहे थे, उनके व्रत का कारण था कि अछूतों का चुनाव हिन्दुओं से अलग न किया जावे बल्कि हिन्दुओं में ही शरीक समझा जाय। सम्पूर्ण देश के योग्य नेता इस समस्या के सुलझाने में लगे हुये थे। महात्माजी के

कार्य को सफल बनाने के लिये राजेन्द्रबाबू ने देश में दौरा किया, ताकि अछूतों की समस्या को सुलझाने में सहायता दे सकें। राजेन्द्रबाबू ने बिहार में बड़ी सरगर्मी से कार्य आरम्भ किया। हजारों अछूतों की सभायें की गईं, सहस्रों मुहल्लों की सफाई, हजारों हरिजन विद्यार्थियों को वजीफे देकर राजेन्द्रबाबू ने बिहार की गणना अछूत उद्धार के कार्य में भी किसी भी सूबे से पीछे नहीं रहने दी। सभी प्रान्तों के हरिजनों ने महात्माजी के उपवास के कारण सभायें करके महात्माजी को तार भेजे कि हम अछूत लोग अपना प्रतिनिधित्व चाहते अवश्य हैं मगर हिन्दुओं के साथ रह कर चाहते हैं उनसे पृथक होकर हमको अपना प्रतिनिधित्व नहीं चाहिये। पूना में उच्च जाति के हिन्दुओं की एक बड़ी भारी सभा हुई जिसमें भारतभूषण पं० मदनमोहन मालवीय, केलकर, सावरकर, राजा और अम्बेडकर भी शामिल हुए। उस सभा में निश्चय किया गया था कि अछूतों का निर्वाचन अलग न होकर हिन्दुओं के अन्तर्गत समझा जाय। इस प्रस्ताव पर अछूतों के नेताओं के हस्ताक्षर थे और उच्च जाति के हिन्दुओं के भी इस प्रस्ताव को सरकार ने स्वीकार कर लिया।

उस समय अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान राजगोपालाचार्य थे। उन्होंने विचार किया और अपने से योग्य व्यक्ति इस कार्य के लिये उनकी दृष्टि में राजेन्द्र बाबू से अच्छा कोई न मिला। राजागोपालाचार्य ने राजेन्द्र बाबू

को स्थानापन्न राष्ट्रपति बना दिया। राष्ट्रपति की हैसियत से राजेन्द्र बाबू ने चौथी जनवरी सन् १६३३ ई० में सत्याग्रह संग्राम की वर्षगांठ मनाने के लिये एक वक्तव्य निकाला। इस वक्तव्य के कारण आपको १५ मास के कठिन कारावास का दण्ड मिला। जेल की सख्तियों के कारण राजेन्द्र बाबू का स्वास्थ्य बहुत ही ख़राब हो गया था। आपको जेल में ही दमा रोग के दौरे होने आरम्भ हो गये थे। इस कारण सरकार ने जब देखा कि राजेन्द्र बाबू की दशा दिन प्रति दिन ख़राब होती चली जा रही है, तो आपको सज़ा के समय से पूर्व ही छोड़ना पड़ा। आपके समय पूरा होने में केवल एक मास शेष रह गया था, राजेन्द्र बाबू जेल से चार जनवरी को छूट कर आये और उसके ११ दिन बाद ही बिहार का भूचाल आ गया।

राजेन्द्र और बाढ़ पीड़ित

भगवान् बुद्ध ने एक दिन एक नदी के किनारे अपने शिष्य आनन्द से कहा था कि संसार के सभी मनुष्यों को तृष्णा कैसे खिला खिला कर मारती है। मनुष्य तृष्णा के चक्कर में फँस कर अपना सारा जीवन कैसे नष्ट कर देते हैं। और परोपकार जैसे महान् अस्त्र की कोई इतनी चिन्ता नहीं करता जितनी कि उसको करनी चाहिये। मेरी समझ में तो वही मनुष्य भाग्य-शाली है जिसको अपने जीवन में ग़रीबों की सच्ची सेवा का अवकाश मिले।

हम यह बात पहले लिख चुके हैं कि बिहार में भूकम्प आने से ११ दिन पूर्व ही राजेन्द्रबाबू असाध्य रुग्णावस्था में जेल से छूट कर आए थे। राजेन्द्रबाबू अपनी भयंकर बीमारी के कारण रोग शय्या पर पड़े हुए थे। काम करना तो दूर रहा, बैठने तक की शक्ति नहीं थी, मगर अपने जीवन की परवाह न करके राजेन्द्रबाबू ने बिहार की वह सेवा की जिसके कारण आपका नाम बिहार के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायगा।

हम पहले ही लिख चुके हैं कि राजेन्द्रबाबू के जीवन का उद्देश्य सादगी के साथ ग़रीबों की सेवा करना है। जब कभी बिहार में ग़रीबों पर संकट आया है राजेन्द्रबाबू ने प्रत्येक संकट के समय बिहार की प्राण-पण से सच्ची सेवा की है। सन् १६२३ ई० में गंगाजी में बड़ी भयंकर बाढ़ आई थी, जिसका यदि आज इतने दिन बाद बयान किया जाय तब भी सहृदय सज्जनों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उन दिनों में शाहाबाद, पटना, सारन, और मुंगेर आदि स्थानों में गंगा की बाढ़ ने लोगों का सर्वस्व नष्ट कर दिया था। उस समय बाढ़ के कारण न किसानों के पास अन्न रह गया था न जानवरों के लिये चारा। लोगों की दीन दशा राजेन्द्रबाबू से नहीं देखी गई। राजेन्द्रबाबू गुजरात और बम्बई जाकर बाढ़ पीड़ितों के लिए रुपया इकट्ठा करके लाये और उन्होंने भूखों को रोटी दी। चम्पारन के १६३१ के अकाल में भी राजेन्द्रबाबू ने किसानों की बड़ी भारी मदद की थी।

इन्हीं सेवाओं के कारण बिहार में प्रत्येक मनुष्य राजेन्द्रबाबू को बिहारी गान्धी के नाम से पुकारता है। तब भला इस प्रकार गरीबों की सेवा करनेवाला भूकम्प के समय कैसे चुपचाप बैठ सकता था। राजेन्द्रबाबू अपनी बीमारी के कारण रोग शय्या पर पड़े हुए थे। भूकम्प की भीषणता के कारण आपकी रोग-शय्या बिहार रिलीफ़ कमेटी का कार्यालय बन गई। आपकी चारपाई के चारों ओर चौबीसों घंटे सहायक कार्यकर्ताओं का आना जाना बना ही रहता था। चारपाई पर पड़े ही पड़े आपने देशवासियों की सेवा का ज़ोरों के साथ श्रीगणेश कर दिया था। सारे देश के नाम सहायता की अपील निकाली गई। राजेन्द्रबाबू ने महात्मा गान्धी और रवीन्द्रबाबू से कहकर विदेशों के लिये भी अपील निकलवाई। जिसके कारण देश विदेशों से बड़ी-बड़ी रक़में पीड़ितों की सहायता को आने लगीं। वाय-सराय ने भी इस कार्य के लिये अपील की थी, मगर वायसराय की रिलीफ़ कमेटी होते हुये भी राजेन्द्रबाबू के पास अधिक धन सहायता में आने लगा। अधिक धन आने का मतलब यही है कि देशवासी राजेन्द्र बाबू में कितना विश्वास रखते हैं।

मगर राजेन्द्रप्रसाद में अभी तक इतना दम नहीं आया था कि अच्छी तरह दो चार घंटे चारपाई पर बैठकर काम कर सकते, फ़िर भी डाक्टरों की दवा राजेन्द्रबाबू पर अपना पूर्ण प्रभाव दिखा रही थी। उनकी देख भाल और दवा ने राजेन्द्रबाबू को चलने फिरने के लायक़ बनाया और ज्यों ही

राजेन्द्रबाबू चलने फिरने के लायक़ हुये कि आपने सारे बिहार में जहाँ पर भूकम्प ने अधिक नुक़सान पहुँचाया था दौरा करना आरम्भ कर दिया। स्थान-स्थान पर जाकर दीन-दुखियों की दुर्दशा का अपनी आँखों से अवलोकन किया। और देखा कि किस प्रान्त के निवासियों को कितनी सहायता की आवश्यकता है। इसके पश्चात् आपने कार्य को संगठन कर्ताओं द्वारा बाँटा। एजेण्ट स्थान-स्थान पर नियत किये गए। सहायता का काम सरगर्मी के साथ होने लगा। सबसे पहले सहायता का कार्य आपने केवल बिहारी कार्यकर्ताओं तक ही रक्खा, मगर बाद में इस कार्य को सम्पादित करने के लिये एक अखिल भारतीय समिति बनाई गई। महात्मा गान्धी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महामना पं० मदनमोहन मालवीय, सेठ घनश्यामदास बिडला, सेठ जमनालाल बजाज, श्री बल्लभभाई पटेल आदि नेता इस समिति के सभासद् थे। इन महान् व्यक्तियों की सहायता से भूकम्प पीड़ित लोगों को भली प्रकार की सहायता मिलने लगी। जब नेताओं ने राजेन्द्रबाबू की तत्परता, कार्यशीलता और लगन देखी तो सभी आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

राजेन्द्रप्रसाद त्याग और तपस्या की साक्षात् सजीव मूर्ति हैं। आपने बचपन से लेकर अब तक सार्वजनिक कार्य के मुक़ाबिले अपने व्यक्तिगत कष्टों को सदा एक ओर ही रखने का प्रयत्न किया है। बिहार की तो आपने इस प्राण-पण से सेवा की है कि बिहार प्रान्त का बच्चा बच्चा आपकी सेवाओं की

भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहा है। राजेन्द्रबाबू कष्टों को देखकर घबराने वाले नहीं। आपने तो सदैव कष्टों से ही लाभ उठाकर अपने जीवन को सफल बनाया है।

बिहार का भूकम्प

१५ जनवरी सन् १९३४ ई० में बिहार में एक भयंकर भूकम्प आया, जिसने बिहार प्रान्त के बहुत से भू-भाग को सर्वदा के लिये नष्ट कर दिया। जितने भू-भाग पर इसका असर हुआ और जितना इससे नुक़सान हुआ, इन दोनों बातों को देखते हुए संसार के इतिहास में यही भूकम्प सबसे बड़ा भूकम्प माना गया है। इससे लगभग ३८००० वर्गमील भूमि चौपट हो गई, जिसमें चम्पारन, मुजफ्फ़रपुर, दरभंगा, सारन, मुंगेर, भागलपुर और पूर्णिया ज़िले सम्मिलित हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इससे कमसे कम दो करोड़ निवासियों को अवश्य ही नुक़सान पहुँचा होगा। भूकम्प के कारण कम से कम २०,००० आदमी काल के गाल में सर्वदा के लिये समा गये। लगभग १० लाख घर बरबाद हो गये; लगभग ८० हज़ार के कुँए और तालाब ख़राब हुये। ज़मीन फट जाने के कारण ज़मीन से बालू निकल पड़ी और उस बालू ने ८ लाख एकड़ उपजाऊ ज़मीन को ढक कर बरबाद कर दिया। कुछ ज़मीन दरारों से पानी ने निकल कर ढक ली। दूर-दूर तक की सड़कें और रेल के ख़राब हो जाने के कारण उन स्थानों में आना

जाना तक बन्द हो गया।

सरकारी उपायों के अलावा, एक ग़ैर सरकारी कमेटी ने भी बड़े विस्तार के साथ इस कार्य में सहायता देने का कार्य किया। यह कमेटी बिहार सैन्ट्रल रिलीफ़ कमेटी के नाम से मशहूर है, और कांग्रेसियों का इसमें प्रधान हाथ था। यदि वास्तव में पूछा जाय तो बिहार भूकम्प का अधिक भार तो काँग्रेसियों के ऊपर ही पड़ा जो कि सविनय अवज्ञा-आन्दोलन के सिलसिले में जेलों की चहार दीवारी में बन्द थे। कमेटी के प्रधान राजेन्द्रबाबू ने ऐलान किया कि भूकम्प पीड़ितों की सहायता के कार्य में मैं सरकार से सहयोग करने को सर्वथा सन्नद्ध हूँ, और सरकार ने भी इस बात को अच्छी तरह माना है कि इस कमेटी ने जो धन की अपील भारतीय जनता से की थी उसका जनता पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। एक दम सहायता के कार्य के लिये बड़ी रक़में आने लगीं। २६ लाख रुपये की सहायता तो नक़द मिली और इसके साथ पहनने ओढ़ने के कपड़े, कम्बल, चावल, आटा, गेहूँ, बर्तन, दवाइयाँ, चाय, बच्चों और बीमारों के खाने का भोजन, बाँस, लकड़ी, टीन के पतरे, तिरपाल, टाट आदि मकान बनाने का सामान भी मिला जो मिलाकर तीन लाख रुपये से कम क़ीमत का न था।

सहायता के काम को कराने के लिये पहले अलग-अलग कमेटियाँ नहीं बनी थीं, इसलिये कार्य करने में ज़रा कठिनाइयाँ पैदा हो गईं। सबसे पहले कमेटी ने प्रत्येक ज़िले में अपने

एजेण्ट भेजे और एजेण्टों की मदद से सहायता का कार्य शुरू किया गया। केन्द्रों की संख्या अन्त में २५० हो गई थी। सम्पूर्ण देश ने प्राणपण से बिहार को भूकम्प के समय सहायता प्रदान की थी। भारत के अन्य प्रान्तों से केवल रुपये, अनाज और कपड़े ही न आये, स्वयंसेवकों तक ने आकर भूकम्प पीड़ितों की पूरी रीति से सहायता की। इस संकट के समय में कर्मवीर त्यागी महात्मा गान्धी, त्याग तथा तपस्या की साक्षात् मूर्ति पं० जवाहरलालजी नेहरू घनश्यामदास बिड़ला आदि तक ने अपनी सेवायें इस कार्य के लिये अर्पित करदीं। पं० जवाहरलालजी नेहरू तो राजद्रोह के अपराध में क़ैद की सजा मिलने के पश्चात् इस सेवा से वंचित कर दिये गये। जिन दिनों सहायता का कार्य ज़ोरों पर चल रहा था उस समय स्वयंसेवकों की संख्या २००० के लगभग थी ,जिनमें डाक्टर, वैद्य, इंजीनियर, हिसाब-किताब के निरीक्षक तथा प्रमुख जन सेवक सभी शामिल थे।

सबसे प्रथम और आवश्यक कार्य जो भूकम्प के समय किया गया था वह था गिरी हुई इमारतों के मलबे को उठाना, मरे हुओं की लाशों की अन्त्येष्टि कराना, और पीड़ितों के लिए खाना, कपड़े, अस्थायी निवास, पानी, दवा आदि का प्रबन्ध करना। किसानों की ईख को पेरने के लिये कोल्हुओं की भी फ़ौरन व्यवस्था की गई थी, जिससे कि उनके गन्ने की फ़सल का उचित रीति से उपयोग किया जा सके। भूकम्प के कारण खाँड़ के कारखाने बिलकुल ही चलने के काबिल नहीं रहे। यदि

इतनी जल्दी कोल्हुओं का प्रबन्ध नहीं किया जाता तो किसानों की ईख बेकार में ही मारी जाती। इस जल्दी के कार्य में कमेटी ने सात हज़ार मन से अधिक अन्न २००००० की रक़म भोजन के अन्य सामान में, १८००० कम्बलोंके सिवाय और भी बहुतसा कपड़ा ग़रीब जनता में बाँटा। २ हज़ार से अधिक कुओं की सफ़ाई की गई। ३३६ नल के कुओं का निर्माण किया गया। इसके अलावा मनुष्यों को रहने के लिये ७२००० से अधिक आश्रम स्थान बनवाये गये। इन झोंपड़ियों के बनाने के काम में एक लाख ६० हज़ार रुपये ख़र्च हुये।

सबसे अन्त में पुनः निर्माण का कार्य मार्च से शुरू कर दिया गया, जिसमें सबसे अधिक ध्यान पानी पीने के कुँओं अथवा तालाबों की ओर दिया गया। कमेटी ने लगभग ७००० नये कुँए खुदवाये और ७०० के लगभग तालाबों की फिर से खुदाई की। इस बात का निश्चय कमेटी ने शुरू में ही कर दिया था कि लोगों को भीख माँगने के लिए उत्साहित नहीं किया जायगा, परन्तु यह कोशिश की जायगी कि खाना पाने वालों से जहाँ तक हो सके कार्य लिया जायगा। इसलिये भूकम्प से नष्ट हुए इलाकों के बहुत से आदमियों को सड़कों की मरम्मत, तालाबों और कुओं की खुदाई के काम में लगा दिया। और जो लोग काम करने के योग्य न थे उन पर कमेटी ने १ लाख के लगभग व्यय किया। भूकम्प का सबसे अधिक प्रभाव ज़िला चम्पारन में पड़ा। वहाँ के पीड़ितों की संख्या जिनकी सहायता कमेटी ने की थी

लाखों तक पहुँच गई।

जिन स्थानों पर भूकम्प ने जाड़ों के महीने में बर्बादी की थी, वहाँ जुलाई और अगस्त में वो ज़ोर की बाढ़ें आईं कि रहे सहे किसानों को भी ज़मीन में मिला दिया। इसलिये कमेटी की सहायता का काम अक्टूबर तक चलता रहा। अधिक बाढ़ के कारण चारा सभी प्रान्त का एक प्रकार से नष्ट हो गया था। अब यह प्रश्न था कि मवेशियों को चारे की व्यवस्था कहाँ से की जाय। इसलिये सहायता देनेवाली सभा द्वारा सभी किसानों में, जिनके इलाक़े में बाढ़ आई थी, पशुओं के लिये चारा और मनुष्यों के लिये अन्न बाँटा गया था। बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिये कमेटी ने १५० नावों की व्यवस्था करदी थी और उनमें से १०० उपयोग के लिये सरकार के जिम्मे करदी गई थीं। १९३४-३५ की सर्दियों में और उसके बाद कमेटी ने मकान बनाने के लिये विस्तृत रूप से सहायता देने का काम आरम्भ कर दिया जिसके लिये लगभग २ लाख रुपया लोगों में बाँटा गया। इसके साथ साथ लगभग ३ लाख के झोपड़ों की सहायता में ख़र्च किया गया। इन तीन लाख रुपये में मकान बनाने के लिये दी जाने वाली छोटी छोटी रक़में शामिल हैं। पानी के प्रबन्ध में ५ लाख ३५ हज़ार से अधिक ही ख़र्च किया गया। बाढ़ पीड़ितों की सहायता में तीन लाख रुपये कमेटी ने व्यय किये। मवेशियों की सहायता में ८० हज़ार रुपया व्यय किया गया। ४० हज़ार रुपये बाढ़ पीड़ितों और भूकम्प

पीड़ितों की दवा-दारू में खर्च किया गया। ३६ हज़ार रुपया का बीज किसानों में बाँटा गया। अनाज और मकान की मरम्मत में बहुत सी रकमें व्यय की गईं।

राजेन्द्रबाबू का राष्ट्रपति होना

बिहार भूकम्प और बाढ़ में सरगर्मी से कार्य करने के कारण राजेन्द्र बाबू की तपस्या का समाचार देश में बिजली के प्रकाश के समान फैल गया। भारत की जनता और नेताओं ने राजेन्द्र बाबू की लोक सेवा की लगन को देखा तो सबको पता चल गया कि इस समय राजेन्द्र बाबू के समान कर्मवीर, तपस्वी, भद्र पुरुष कोई दूसरा देश के अन्दर नहीं है। राजेन्द्र बाबू की सादगी, समवेदना, सेवा भाव को देख कर चारों ओर से राजेन्द्र बाबू को राष्ट्रपति बनाये जाने के केवल प्रस्ताव ही नहीं आए बल्कि सम्पूर्ण सूबों ने वोट देकर राजेन्द्र बाबू को ही राष्ट्रपति बना कर अपना कर्तव्य पालन किया है।

राष्ट्रपति की हैसियत से जो भाषण आपने दिया था उसकी प्रशंसा भारत के सभी पत्रों ने की थी। उसका थोड़ा अंश पाठकों के सम्मुख रक्खा जाता है।

आपने कहा कि "हमारे साधन स्फटिक के समान हैं हमारी शक्ति जनता की आवाज़ है, हमारा हथियार अहिंसा है। हम एक बार विफल हो सकते हैं, दो बार हो सकते हैं पर एक न एक दिन अवश्य विजयी होंगे।

समाज वादियों से

मैं अहिंसा के सिद्धान्त के किसी भी अंश से समझौता करने को तैयार नहीं। मेरे मित्र समाजवादी आर्थिक शोषण करने वाले तत्त्वों को समूल नष्ट करने को अधीर हो रहे हैं, मगर हम बल प्रयोग द्वारा नहीं बल्कि हृदय परिवर्तन द्वारा ही इष्ट सिद्धि कर सकते हैं। हमारा उद्देश्य आर्थिक शोषण करने वाले व्यक्तियों का नहीं बल्कि आर्थिक शोषण में सहायक शक्तियों का विनाश करना है। हमारा झगड़ा पापी से नहीं पाप से है।"

कृतज्ञता

दिवंगत नेताओं, ज्ञात और अज्ञात राष्ट्रीय वीरों के बलिदान के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुये और राष्ट्रपति का पद प्रदान करने के लिये आभार मानते हुये राष्ट्रपति ने कहा कि "मैं इस बात से बख़ूबी परिचित हूँ कि आपने मेरे प्रति जो सम्मान और विश्वास प्रकट किया है वह मेरा व्यक्तिगत सम्मान नहीं अपितु ग़रीब प्रान्त की तुच्छ सेवाओं का पुरस्कार है जो उसने पिछले सत्याग्रह युद्ध में की हैं।

आर्थिक संकट

"देश एक भयंकर आर्थिक संकट में से गुज़र रहा है। सरकार की ब्रिटिश-पक्षपात की नीति ने इसको और भी भयंकर बना दिया है। भारत के दीन किसान मालगुज़ारी, और आबपाशी के

भार से दबे जा रहे हैं। वे उसे देने में असमर्थ हैं। राष्ट्र निर्माण के महकमों का खर्च घटा दिया गया है। व्यापार बन्द पड़ा हुआ है। देश से २०० करोड़ का सोना खिंच कर विदेश पहुँच चुका है। उद्योग धन्धे बन्द पड़े हैं। बेकारी अपरिचित रूप से बढ़ रही है। इन पिछले वर्षों में राष्ट्रीय ऋण में ख़ूब बढ़ती हुई है, जिसके कारण कर-दाताओं पर करों का भारी बोझ लाद दिया गया है।

ओटावा पैक्ट

"ओटावा-पेक्ट जो कि भारत के व्यापार और व्यवसाय की वृद्धि के लिये घातक है और किसानों के लिये अत्यन्त हानि कारक है, जिसकी देश ने एक स्वर से निन्दा की थी, क़ानून में परिणात किया जा चुका है। इसके अमल ने बता दिया है कि आलोचकों का भय साधारण था। इसने ब्रिटिश साम्राज्य-संरक्षण नीति रूपी रथ के पहिये के साथ भारत को कस कर बाँध दिया है।

फैडरल धारा सभा की रचना

"फैडरल सभा में नामज़द और सरकारी मेम्बरों की जगह देशी राज्यों के प्रतिनिधि होंगे, जो अधिकतर दक़ियानूसी और ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के समर्थक होंगे और ब्रिटिश भारत के सम्पर्क से सर्वथा बाहर रहने वाले होंगे। वे भारतीय जनता के प्रति उत्तर दायित्व अनुभव करने के बजाय ब्रिटिश सरकार के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी अनुभव करेंगे। इसका फल यह होगा कि

सरकार इस समय से भी अधिक स्वेच्छाचारी और जनता के मत का अनादर करने वाली होगी।

इसके अतिरिक्त संख्या में भी नामज़द मेम्बरों की अधिकता होगी। यदि कोर्ट सुधार योजना के अनुसार वर्तमान् असेम्बली के १४६ मेम्बरों में से ४० व २५.५ प्रतिशत नामज़द मैम्बर होते हैं। श्वेत पत्र के अनुसार ३७५ में १२५ व ३३.७ प्रतिशत देशी राज्यों द्वारा नामज़द होंगे। इस प्रकार नामज़द सभासदों की संख्या में ६ फ़ीसदी की बढ़ती हुई।"

राजेन्द्र बाबू ने देश के सम्पूर्ण पहलुओं पर विचार करके देश की जनता के सामने ब्रिटिश नीति की पोल खोल कर रखदी। आगे चल कर राष्ट्रपति महोदय ने बतलाया है कि हमें चाहे जितनी असफलतायें क्यों न हुई हों, हमने बहुत कुछ मार्ग तय कर लिया है। ऐसा न हो कि हम अपने अधैर्य से पिछले पन्द्रह वर्ष में किया हुआ कार्य नष्ट कर दें।

बिहार भूकम्प और काँग्रेस के अधिवेशन के राष्ट्रपति होने के पश्चात् जनता जनार्दन की दृष्टि बिहार के मौन तपस्वी राजेन्द्र बाबू पर पड़ी। तभी से हम इन्हें अखिल भारतीय समस्याओं में भी अधिकाधिक भाग लेते देखते हैं। आज देश में कोई भी नई बात, कोई भी आवश्यक प्रश्न बिना आपके परामर्श के नहीं सुलझाया जाता है। खासकर बिहार सम्बन्धी प्रश्नों का हल करना तो इन्हीं की योग्यता और चातुरी पर छोड़ दिया जाता है। बंगाल में कांग्रेस वालों में दलबन्दी हो

गई थी। सेन और सुभाष की लड़ाई के कारण बंगाल में काँग्रेस का बल घट रहा था। हमारे देश के ऐसे ख़ास सूबे में कांग्रेस की यह दलबन्दी बड़ी लज्जा की बात थी। देश के अन्य नेताओं ने भी इसके सुधारने का प्रयत्न किया, मगर सफलता किसी को नहीं मिली अन्त में राजेन्द्रबाबू को कार्य समिति ने यह काम सौंप दिया। राजेन्द्र बाबू ने दोनों दलों का भेद-भाव इस प्रकार दूर किया कि आज दोनों दल एक दूसरे के साथ कन्धे से कन्धा लगा कर देश के कार्य में लगे हुए हैं।

मुस्लिम लीग की काँग्रेस विरोधी नीति को आज सारा देश जानता है। मगर काँग्रेस कभी भी मुस्लिम लीग वालों को द्वेष की दृष्टि से नहीं देखती। बल्कि उनको उचित मार्ग पर लाने का प्रयत्न कर रही है। एक बार यह सारा कार्य राजेन्द्र बाबू के ज़िम्मे डाला गया। राजेन्द्रबाबू ने मुस्लिम लीग के सर्वेसर्वा श्री मुहम्मद अली जिन्ना को मनाने की जी जान से कोशिश की मगर राजेन्द्रबाबू को इस कार्य में सफलता के दर्शन नहीं हुए। सन् १९३५ ई० में देश में शासन विधान लागू हुआ, जिसके अनुसार काँग्रेस ने शासन में भाग लेना निश्चय किया। काँग्रेस के इस कार्य को सफल बनाने के लिये आपने देश में तूफ़ानी दौरा किया। इन्हीं के परिश्रम का फल है कि बिहार में ही नहीं भारत के आठ सूबों में काँग्रेस-मन्त्रि-मण्डल अपना शान से कार्य कर रहे हैं। राजेन्द्र बाबू चाहते तो बिहार के प्रधान मंत्री बन सकते थे, मगर आपने अपने साथियों को

उत्साहित करने की ग़रज से मंत्रि मण्डल में भाग नहीं लिया। बिहार का मंत्रि मण्डल बिना राजेन्द्रबाबू की सलाह के कोई कार्य विशेष नहीं करता।

बिहार-मन्त्रि-मण्डल का कार्य

बिहार की स्थिति अन्य काँग्रेसी प्रान्तों से भिन्न है। स्थायी बन्दोबस्त होने के कारण इसे मालगुज़ारी की आमदनी भी कम ही होती है, जिसका हिसाब लगभग २ करोड़ के है। परन्तु इसके अलावा काँग्रेस मन्त्रिमण्डल चुनाव घोषणा में किये गये वायदों के अनुसार साहसपूर्वक कार्यक्रम में अग्रसर है और किसान-सुधार व राष्ट्रनिर्माण के अनेक कार्य कर रहा है। राजेन्द्रबाबू के साथी प्रधानमंत्री श्री कृष्णसिंहजी अपने सहयोगियों सहित सदैव से प्रान्त के काम में ही लगे रहते हैं। इसका कारण है कि जब से काँग्रेस-मंत्रिमण्डल के हाथ शासन-सूत्र आया है तब से बिहार की कायापलट हो गई है। काँग्रेस-मन्त्रिमण्डल ने बिहार में जेलसुधार, रिश्वतख़ोरी की बन्दी, राजनैतिक क़ैदियों की रिहाई, किसानों की मदद को कर्ज़ क़ानून, देहात सुधार के हेतु आमदनी बढ़ाने को ज़मीदारों की आमदनी पर कर, टैनेन्सी क़ानून में सुधार, सारन, चम्पारन आदि ज़िलों में शराबबन्दी, शुगर नियंत्रण क़ानून, बाढ़ों को रोकने का प्रबन्ध, मलेरिया के ख़िलाफ़ युद्ध, साक्षरता-आन्दोलन और हिन्दुस्तानी को राष्ट्रीय भाषा बनाने का प्रयत्न आदि कार्य किए हैं।

बिहारी काँग्रेस मन्त्रिमण्डल अगले साल और भी अनेक राष्ट्र-निर्माण के कार्य करने जा रहा है। घरेलू व्यवसायों को प्रोत्साहन दिया गया है और सब सरकारी दफ्तरों को जहाँ तक हो सके स्वदेशी चीज़ें ही इस्तैमाल करने की आज्ञा दे दी गई है। बिहारी गान्धी बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने बिहारी व बंगालियों का प्रश्न भी बड़ी उत्तमता से निबटा दिया है। ज़मींदारों के साथ भी एक प्रकार से मंत्रि-मण्डल ने समझौता कर लिया है। इसलिए बिहार में बड़ी तेज़ी से जनता के लाभ के काम किये जा रहे हैं।

मगर सभापति बन जाने के बाद भी राजेन्द्रबाबू का उत्साह देश-हित के कार्यों क करने में दिन दूना रात चौगुना होता हुआ चला जा रहा हैं। सम्पूर्ण देश महात्माजी, खान अब्दुल-गफ़फार खाँ, राजेन्द्रबाबू और जवाहरलाल नेहरू को बड़ी आशा के साथ देखता है। उपर्युक्त महानुभावों में महात्माजी के सिवाय ये दोनों सज्जन भी फ्रन्टीयर गाँधी और बिहारी गाँधी के नाम से देश में विख्यात हैं, और दिन प्रति दिन देशसेवा करने के कारण राजेन्द्रबाबू का स्थान बढ़ता जा रहा है। पिछले कई वर्षों से काँग्रेस का कार्य संचालन करने के लिये हाई कमाण्ड बना रक्खी है। उसके मुख्य कार्यकर्ताओं में राजेन्द्रबाबू का भी नाम है। और जब कोई संकट का समय आता है तो उसे सुलझाने का कार्य राजेन्द्रबाबू को ही दिया जाता है!

काँग्रेस में त्रिपुरी के स्थान पर मतभेद पैदा हो गया था। और इस मतभेद के कारण देश को बड़ी हानि होने की आशंका

थी। सुभाष बाबू की बीमारी के कारण मामला दिन पर दिन ख़राब होता हुआ नज़र आने लगा। ऐसी विषम अवस्था को भला कर्मवीर बिहारी गान्धी किस प्रकार देख सकते थे? आपने अपने कठिन प्रयत्न से महात्माजी और सुभाष बाबू को मिला कर काँग्रेस को टुकड़े होने से बचा दिया है। राष्ट्रपति होते ही राजेन्द्रबाबू को देश की अवस्था पर विचार करने का अवसर मिला। लखनऊ के शिया-सुन्नियों के मामले ने एक बड़ा ही भयंकर रूप धारण कर रक्खा है। राजेन्द्रबाबू राष्ट्रपति होते ही लखनऊ में शिया और सुन्नियों में उनके बड़े-बड़े नेताओं तथा प्रधान मंत्री को बुलाकर शीघ्र ही फैसला करने के कार्य में लगे हुये हैं। महात्मा गान्धी के अहिंसा के उद्देश्य को सफल बनाने में आपको कई बार सफलता मिल चुकी है। इसलिये आपने 'राष्ट्रपति' बनते ही कह दिया था कि कार्यक्रम नये ढंग से न बनाकर पुराने कार्य को पूरा करने का ही प्रयत्न किया जायगा अपने राष्ट्रपति की महानता का जितना गुणगान किया जाय उतना ही कम है। आये दिन सैकड़ों मनुष्य पृथ्वी पर पैदा होते। हैं मगर, उनको कोई यह भी नहीं जान पाता कि कब पैदा हुये और कब चल दिये। उसी महापुरुष का जीवन सार्थक अथवा सफल समझना चाहिये जो अपने देश के काम आवे। भारत माता डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद जैसे पुत्रों से अपने को धन्य समझती है। यदि इस प्रकार के दस-पाँच वीर शिरोमणि देश में उत्पन्न हो जायँ तो शीघ्र ही भारतमाता को दासता की बेड़ियों को काट कर स्वतंत्र बनाया जा सकता है।